बिज़नेस स्टैंडर्ड
वर्ष 17 अंक 134

मुद्रास्फीति प्रबंधन पर ध्यान

जून माह की हेडलाइन मुद्रास्फीति दर 5.08 फीसदी के साथ चार माह के उच्चतम स्तर पर है जबकि उससे पिछले माह यह 4.8 फीसदी के स्तर पर थी। यह दर रिजर्व बैंक के 4 फीसदी के मुद्रास्फीति लक्ष्य से काफी अधिक है। बहरहाल, बाजार में एक नजरिया यह भी है कि चूंकि कोर मुद्रास्फीति की दर, जिसमें खाद्य और ईंधन आदि पदार्थ शामिल नहीं होते हैं, वह करीब तीन फीसदी पर है इसलिए मौद्रिक नीति समिति नीतिगत रीपो दर में कमी करने पर विचार कर सकती है। हेडलाइन दर प्राथमिक तौर पर खाद्य कीमतों से संचालित होती है। मोटे तौर पर यह आपूर्ति क्षेत्र से प्रभावित होती है और मौद्रिक नीति का ऐसी परिस्थितियों पर बहुत सीमित असर होता है। जून में खाद्य मुद्रास्फीति की दर 9 फीसदी से अधिक थी। मौद्रिक नीति समिति के हड़बड़ी नहीं करने की ठोस वजह मौजूद हैं लेकिन नए शोध नीतिगत दर के मसले पर समिति के बहुमत के रुख को मजबूती देते हैं।

रिजर्व बैंक के ताजा मासिक बुलेटिन में प्रकाशित एक शोध आलेख, हालांकि यह केंद्रीय बैंक की आधिकारिक स्थिति को नहीं दर्शाता है, दिखाता है कि 2023-24 में चौथी तिमाही के लिए ब्याज की स्वाभाविक दर 1.4-1.9 फीसदी के बीच रही। उल्लेखनीय है कि ताजा अनुमान 0.8 से एक फीसदी के पिछले अनुमान से काफी बेहतर है। उक्त अनुमान 2021-22 की तीसरी तिमाही के लिए लगाया गया था। स्वाभाविक दर से तात्पर्य ब्याज की ऐसी दर से होता है जहां बचत स्थिर कीमतों के अनुरूप निवेश के बराबर हो। मौद्रिक नीति के लिहाज से देखें तो वास्तविक नीतिगत दर और स्वाभाविक ब्याज दर के बीच का अंतर नीति का रुख दर्शाता है या फिर वह यह दिखाता है कि नीति का रुख प्रतिबंधात्मक है या समायोजन वाला। अगर वास्तविक नीतिगत दर स्वाभाविक दर से अधिक है तो मौद्रिक नीति प्रतिबंधात्मक है। इसका विपरीत भी सही है। शोध आलेख में यह भी कहा गया है कि देश में ब्याज की स्वाभाविक दर में महामारी के बाद की अवधि में सुधार देखने को मिला है। ऐसा मोटे तौर पर संभावित उत्पादन में मजबूत वृद्धि के कारण हुआ है।

चूंकि एमपीसी का अनुमान है कि चालू वर्ष में हेडलाइन मुद्रास्फीति की औसत दर 4.5 फीसदी रहेगी इसलिए 6.5 फीसदी की नीतिगत रीपो दर को निरपेक्ष माना जा सकता है क्योंकि यह स्वाभाविक ब्याज दर के ऊपरी स्तर के करीब है। निचले स्तर पर भी नीतिगत दर को 50 आधार अंक तक ही कम किया जा सकता है। बहरहाल, यह बात उल्लेखनीय है कि मौजूदा ढांचागत बदलावों के कारण देश में स्वाभाविक ब्याज दर का अनुमान लगाना आसान नहीं है। ऐसे में मौद्रिक नीति समिति के लिए ऊपरी सिरे पर विचार करना बेहतर होगा। ऐसा इसलिए भी क्योंकि स्वाभाविक दर बढ़ रही है।

देश की अर्थव्यवस्था की निवेश संबंधी जरूरतों को देखते हुए भारत को उच्च बचत की आवश्यकता है जो अधिक नीतिगत समायोजन से प्रभावित हो सकती है। यह बात भी रेखांकित करने लायक है कि बैंकों को जमा की तुलना में उच्च ऋण वृद्धि का सामना करना पड़ रहा है। ऐसे में उन्हें बाजार से फंड जुटाने पर विवश होना पड़ रहा है। रिजर्व बैंक के गवर्नर शक्तिकांत दास ने गत सप्ताह सही उल्लेख किया कि इससे बैंकिंग व्यवस्था ढांचागत तरलता की दिक्कतों की शिकार हो सकती है। नीतिगत दर में समय से पहले कमी से यह प्रवृत्ति बढ़ सकती है। इन तमाम मुद्दों पर विचार करते हुए यह समझदारी भरा प्रतीत होता है कि मौद्रिक नीति समिति मुद्रास्फीति की दर को सहजता से चार फीसदी के लक्ष्य के करीब स्थिर होने दे। चूंकि भारत मजबूती से वृद्धि हासिल कर रहा है और शोध दिखाते हैं कि हमारी क्षमताओं में सुधार है, तो यह रिजर्व बैंक को जरूरी नीतिगत गुंजाइश प्रदान करता है ताकि वह मुद्रास्फीति प्रबंधन पर ध्यान दे सके।

अजय मोहंती

कांग्रेस का प्रदर्शन और राहुल में बदलाव

लोकसभा चुनाव में कांग्रेस पार्टी को 99 सीट पर जीत मिलते ही वे तीन सवाल खत्म हो गए हैं, जो पिछले दो दशकों से राहुल गांधी को परेशान कर रहे थे।

राहुल गांधी जब नरेंद्र मोदी के नेतृत्व वाली तीसरी सरकार के पहले पूर्ण संसद सत्र में जा रहे हैं तब उनके लिए यह राहत की बात हो सकती है कि पिछले दो दशकों से उन्हें परेशान कर रहे तीन सवाल अब खत्म हो चुके हैं। पहला, क्या भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) कांग्रेस को गंभीरता से लेती है या उसे गंभीरता से लेना चाहिए? दूसरा, क्या वह राहुल गांधी को गंभीरता से लेती है या लेना चाहिए? और तीसरा, क्या कांग्रेस जैसी मृतप्राय पार्टी में नई जान फूंकी जा सकती है?

इन तीनों सवालों के जवाब मतगणना के दिन यानी 4 जून की दोपहर को मिल गए। न केवल भाजपा को अब कांग्रेस और राहुल गांधी को गंभीरता से लेना होगा बल्कि उनकी पार्टी को भी अब 2029 में सत्ता में वापसी की वास्तविक राह नजर आ रही है। कम से कम उसमें नई जान नजर आ रही है और वह दोबारा लड़ने को तैयार दिख रही है। सोमवार को मॉनसून सत्र की शुरुआत से ही आपको यह दिखने भी लगेगा।

इस सत्र में केंद्रीय बजट का तड़का भी लगेगा। नए उत्साह से भरी कांग्रेस क्या अंतर लाएगी यह शेष विपक्ष के आचरण से भी स्पष्ट हो जाएगा। तृणमूल कांग्रेस के सांसद डेरेक ओब्रायन ने शुक्रवार को द इंडियन एक्सप्रेस में जो आलेख लिखा था वह पढ़ा जाना चाहिए। उन्होंने अपनी बात यह कहकर शुरू की कि संसद स्थगित होने का अधिक फायदा आखिर किसे होता है। जाहिर सी बात है सत्ता पक्ष को। जब विपक्ष का संख्या बल कम था और उसकी बात नहीं सुनी जाती थी तब स्थगन और सदन से बहिर्गमन जैसे उपाय ही उसके पास थे। लेकिन अब वह अखाड़े में उतरकर ताल ठोकेगा।

राष्ट्र की बात
शेखर गुप्ता

ओब्रायन की पार्टी तृणमूल कांग्रेस ने पश्चिम बंगाल में शानदार प्रदर्शन किया है। लेकिन इस बार अगर कांग्रेस इतनी मजबूत वापसी नहीं करती तो क्या तृणमूल इतने जोश में होती? बिना मजबूत आधार के विपक्ष का कोई भी गठबंधन विश्वसनीय नहीं हो सकता है। कांग्रेस अभी तक यहीं नाकाम हो रही थी मगर अब हालात बदल गए हैं।

जब मैं यह आलेख लिख रहा था तब मैंने अपनी टीवी स्क्रीन पर जे पी नड्डा को देखा जो अब भी भाजपा के अध्यक्ष हैं। वह ओडिशा में बोल रहे थे और उनका भाषण कांग्रेस और गांधी परिवार पर केंद्रित था, खास तौर पर प्रियंका और राहुल गांधी की जोड़ी पर। वह उन्हें पढ़े लिखे अनपढ़ कह रहे थे। उस राज्य में कह रहे थे, जहां कांग्रेस का वजूद ही नहीं के बराबर है। नड्डा की बात से हमें राहुल के नजरिये से रखे गए तीन में से दो सवालों का जवाब मिल जाता है। भाजपा के लिए कांग्रेस और गांधी परिवार की तिकड़ी मायने रखती है। तीसरे सवाल का जवाब स्वयं राहुल को देना होगा। 2004 में पहली बार सांसद बनने के बाद से उन्होंने अपनी एक राजनीतिक छवि बनाई है, जिससे उन्हें पीछा छुड़ाना होगा। यह छवि हमला करके भागने वाली राजनीति की है।

इसके लिए सोशल मीडिया या भाजपा और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की कानाफूसी वाली मशीनरी को दोष नहीं दिया जा सकता है। सार्वजनिक जीवन में दो दशक का समय प्रतिष्ठा बनाने के लिए पर्याप्त है चाहे अच्छी बनाएं या खराब। 2024 के चुनावों तक वह ऊहापोह के शिकार लगते थे। अगर वह हालिया सफलता के बाद इसे पीछे छोड़ देते हैं तो न केवल उनकी प्रतिष्ठा बदल जाएगी बल्कि सबसे अहम सवाल का जवाब भी मिल जाएगा: क्या कांग्रेस के पास सत्ता में वापसी का मौका है?

राहुल के पास ढाई बड़ी सफलताएं हैं। 2009 में लोक सभा चुनाव में उत्तर प्रदेश में 21 सीट जिताकर उन्होंने अपनी पार्टी में नई जान फूंक दी थी। जीतने वाले लगभग सभी उम्मीदवार उनके चुने हुए थे। दूसरी कामयाबी 2018 के जाड़ों में मिली जब पार्टी को राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के विधानसभा चुनावों में कामयाबी मिली। आधी कामयाबी 2017 के गुजरात विधानसभा में मिली जब कांग्रेस ने भाजपा को बहुत कड़ी टक्कर दी थी। उन चुनावों में विभिन्न जातियों के युवा और बागी नेताओं ने कांग्रेस का साथ दिया था, जिसने भाजपा को वाकई में डरा दिया था। पार्टी को अपने प्रदेश में सत्ता में बनाए रखने के लिए खुद मोदी को मैदान में उतरकर भारीभरकम प्रचार अभियान चलाना पड़ा था। यह चुनाव कितना कांटे का था और यह जीत उनके लिए क्या मायने रखती थी, इसे परिणामों के बाद उनके भाषण से समझा जा सकता है। कैमरों ने उनकी आंखों में आंसुओं की झलक कैद की, जो आम तौर पर नहीं दिखते। मैंने 29 दिसंबर, 2017 को इसी स्तंभ में इस बात का जिक्र भी किया था। अहम बात यह है कि राहुल ने इन तमाम सफलताओं का फायदा उठाकर आगे बड़ी उपलब्धियां हासिल करने की कोशिश नहीं की। 2009 के चुनाव के बाद हमने उन्हें अपनी ही पार्टी के भीतर असंतुष्ट बनते देखा। उन्होंने सजायाफ्ता राजनेताओं के बारे में अपनी ही सरकार का लाया अध्यादेश सार्वजनिक रूप से फाड़ दिया था। हालांकि बाद के कई साक्षात्कारों में उन्होंने अपनी इस हरकत पर खेद भी जताया। दिसंबर 2018 में राज्यों के विधानसभा चुनावों में मिली जीत के बाद भी उन्होंने गठबंधन करने या पार्टी में नई जान फूंकने पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह भटके हुए दिखे। 2017 के गुजरात के विधानसभा चुनाव के बाद भी ऐसा ही हुआ। इनमें से हर लम्हा उनकी राजनीति का अहम मोड़ साबित हो सकता था।

यही वजह है कि हालिया आम चुनाव में बेहतरीन प्रदर्शन के बाद भी उनके समर्थकों के मन में शंका है। इस आशंका से ही उनके प्रतिद्वंद्वियों को उम्मीद है कि काम को सफलतापूर्वक पूरा करने के बाद राहुल एक बार फिर रुचि खो देंगे, गायब हो जाएंगे। परंतु अब तक उन्होंने ऐसा नहीं किया है। वह राजनीतिक रूप से सक्रिय हैं, सार्वजनिक बहसों में दिख रहे हैं और सोशल मीडिया पर भी नजर आ रहे हैं। यह अहम बदलाव है। इससे उनकी पार्टी में उम्मीद जगेगी। हो सकता है कि मोदी को बहुमत के आंकड़े से नीचे रोक लेने की उपलब्धि ही उन्हें आगे के लिए प्रेरित करे और मोर्चे पर लगाए रखे। यह भी हो सकता है कि मोदी, पराजय, शर्मिंदगी, अपमान और मखौल भरे एक दशक ने और उनकी पार्टी तथा उसके मुख्य लोगों को 'एजेंसियों' द्वारा निशाना बनाए जाने ने उन्हें बदल दिया हो। अगर वह इसी तरह डटे रहते हैं तो तीसरे सवाल का जवाब भी मिल जाता है। कांग्रेस वाकई सत्ता में वापसी की उम्मीद कर सकती है।

यहां मैं आपको राहुल पर लिखे गए दो आलेखों की याद दिलाऊंगा, जो एक दशक के अंतराल पर आए थे। पहला आलेख 6 अप्रैल 2013 को तब लिखा गया था, जब वह कांग्रेस के उपाध्यक्ष बने थे और उन्होंने जयपुर में 'सत्ता जहर है' का मशहूर भाषण दिया था। इसमें हमने उनकी राजनीति की तीन खामियां बताई थीं। इनमें से पहली दो का संबंध भारत की असमानता और आकांक्षाओं के बारे में उनकी गलत समझ से था। तीसरी खामी सत्ता को जहर कहने की उनकी मान्यता थी। लोकतंत्र में सत्ता जहर नहीं होती। यह अदभुत उपहार है, सम्मान है, जो मतदाता आपको देते हैं। मैंने तब लिखा था कि सत्ता को जहर कहना सामंती सोच है, लोकतांत्रिक नहीं।

दूसरा आलेख मैंने 24 दिसंबर, 2022 को लिखा था, जब वह भारत जोड़ो यात्रा पर थे और उसमें भी कुछ सवाल उठाए गए थे। तब हमने लिखा था कि उन्हें लोगों के हुजूम से घिरना, भीड़ और स्वीकार्यता बढ़ना पहले से ज्यादा पसंद आ रहा है। वह विचारधारा पर अभियान खड़ा कर रहे थे: भारत जोड़ो बनाम भारत तोड़ो, प्रेम बनाम घृणा, धर्मनिरपेक्ष बनाम सांप्रदायिक, गांधी बनाम सावरकर और ऐसा लग रहा था वे इनका लुत्फ ले रहे हैं।

यहां हमने दो और प्रश्न उठाए। पहला, कांग्रेस क्या चाहती है? इसका जवाब आसान था: सत्ता। दूसरा प्रश्न थोड़ा दिलचस्प था: राहुल गांधी क्या चाहते हैं? वही चाहते हैं, जो उनकी पार्टी चाहती है? अगर ऐसा है तो क्या सत्ता को जहर कहने का उनका विचार बदल गया है? क्या एक दशक तक वनवास और उपहास झेलने के बाद उन्हें सत्ता के लाभ समझ आ गए हैं? अगर इसका उत्तर हां है तभी कांग्रेस सत्ता में वापसी की उम्मीद कर सकती है।

बजट में बैंक निजीकरण पर बढ़ेगी सरकार?

भारतीय स्टेट बैंक (एसबीआई) के प्रमुख दिनेश खारा मंगलवार को पेश होने वाले बजट में ब्याज आय पर कर राहत की हिमायत कर रहे हैं। लगभग सभी बैंकों के प्रमुख भी यही चाहते हैं।

फिलहाल बैंकों को जमा पर अर्जित ब्याज पर टीडीएस (स्रोत पर कर कटौती) काटना पड़ता है। यह तब होता है जब किसी ग्राहक की जमा रकम पर ब्याज साल में 40,000 रुपये से अधिक हो जाता है। बचत खाते में 10,000 रुपये तक के ब्याज पर कर नहीं लगाया जाता है। बैंक प्रमुख लंबे समय से इसकी मांग करते रहे हैं, मगर वे इस पर वित्त मंत्रालय को राजी नहीं कर पाए हैं। कर देनदारी की बात होने पर जमाकर्ताओं के मुकाबले म्युचुअल फंडों एवं शेयरों में दांव लगाने वाले लोग अधिक लाभ की स्थिति में रहते हैं। एक और अहम बात यह है कि दूसरी वित्तीय परिसंपत्तियों के विपरीत बैंक जमा की ब्याज आय पर हरेक वर्ष टीडीएस कटता है, न कि इसे भुनाने के समय।

वित्त वर्ष 2023 में भारतीय परिवारों की शुद्ध वित्तीय बचत कम होकर पिछले पांच वर्षों के न्यूनतम स्तर 14.2 लाख करोड़ रुपये पर आ गई, जो वित्त वर्ष 2022 में 17.1 लाख करोड़ रुपये थी। सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) के प्रतिशत के रूप में यह रकम वित्त वर्ष 2023 में कम होकर 5.3 प्रतिशत रह गई। यह पिछले पांच दशकों का सबसे निचला स्तर था। कर लाभ मिलने से बैंक डिपॉजिट अधिक फायदेमंद हो जाएगा और इस से परिवारों की बचत भी बढ़ेगी।

स्वास्थ्य बीमा क्षेत्र पॉलिसी खरीदने वालों के लिए जीएसटी कम करने और आयकर अधिनियम की धारा 80डी के अंतर्गत अधिक कर रियायत (खासकर वरिष्ठ नागरिकों के लिए) की मांग कर रहा है। वित्त तकनीक (फिनटेक) खंड की कंपनियां भी सरकार से नवाचार करने की आजादी में सहयोग की मांग कर रही हैं। ये सभी पुराने मसले हैं। व्यापक आर्थिक स्तर पर राजकोषीय सुदृढ़ीकरण और आर्थिक वृद्धि बजट के दो प्रमुख लक्ष्य हो सकते हैं। फरवरी 2021 में वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने कहा था कि वर्ष 2021-22 के दौरान बीपीसीएल, एयर इंडिया, भारतीय जहाजरानी निगम, कंटेनर कॉर्पोरेशन ऑफ इंडिया, आईडीबीआई बैंक, बीईएमएल, पवन हंस, नीलाचल इस्पात निगम लिमिटेड सहित अन्य इकाइयों का विनिवेश पूरा हो जाएगा। आईडीबीआई बैंक के अलावा वित्त मंत्री ने अपने बजट भाषण में दो सरकारी बैंकों और एक सामान्य जीवन बीमा कंपनी के निजीकरण की भी बात कही थी।

बैंकिंग साख
तमाल बंद्योपाध्याय

पिछले बजट में अधिक निजी पूंजी की मदद से बैंकिंग तंत्र को मजबूत बनाने पर जोर दिया गया था। इसी को ध्यान में रखते हुए बजट में आईडीबीआई बैंक में सरकार की हिस्सेदारी बेचने का प्रस्ताव दिया गया था। मगर ये दो सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक कौन होंगे इनके नामों पर कयास लगने के अलावा हमने इस मामले में और कुछ नहीं सुना है। आईडीबीआई बैंक के विनिवेश में कितना समय लगेगा? अक्टूबर 2022 और जनवरी 2023 में संभावित बोलीदाताओं से बोलियां आमंत्रित की गई थीं। दीपम को आईडीबीआई बैंक को लेकर कई अभिरुचि पत्र भी मिले थे। अब तक जो योजना सार्वजनिक हुई है उसके अनुसार भारतीय जीवन बीमा निगम (एलआईसी) आईडीबीआई बैंक में अपनी 30.24 प्रतिशत हिस्सेदारी बेचकर इसे घटाकर 19 प्रतिशत करेगी। सरकार अपनी 30.48 प्रतिशत हिस्सेदारी बेच कर इसे 15 प्रतिशत तक करना चाहती है। हिस्सेदारी बिक्री के बाद सरकार एवं एलआईसी की हिस्सेदारी 94.72 प्रतिशत से कम होकर 34 प्रतिशत रह जाएगी जिसके बाद आईडीबीआई बैंक सही मायने में निजी बैंक बन जाएगा। पिछले सप्ताह आईं खबरों के अनुसार आरबीआई ने बजट से पहले आईडीबीआई बैंक के बोलीदाताओं पर अपनी 'फिट ऐंड प्रॉपर' मंजूरी दे दी है। हालांकि, आधिकारिक तौर पर इस बारे में कुछ नहीं कहा गया है। आइए, सार्वजनिक एवं निजी बैंकों के शेयरों के प्रदर्शन और सरकार को उनसे मिलने वाले लाभांश पर बात करते हैं। वित्त वर्ष 2024 में सरकार को सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों से 1.54 लाख करोड़ रुपये लाभांश के रूप में मिले, जो वित्त वर्ष 2023 के 99,913 करोड़ रुपये की तुलना में 55 प्रतिशत अधिक थे। सार्वजनिक क्षेत्र के अधिकांश बैंक अच्छी स्थिति में हैं और उनका बाजार पूंजीकरण ऐतिहासिक स्तर पर रहा है। तो क्या यह बैंकिंग क्षेत्र में विनिवेश की हिम्मत दिखाने सबसे उपयुक्त समय नहीं है? ऐसा कहना आसान है मगर करना मुश्किल। सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में सरकार की हिस्सेदारी कम करने का विचार काफी पुराना है।

वर्ष 2000 में तत्कालीन वित्त मंत्री यशवंत सिन्हा ने सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में सरकारी की हिस्सेदारी घटाकर 33 प्रतिशत करने की योजना की घोषणा की थी मगर यह भी शर्त लगाई थी कि प्रबंधन पर नियंत्रण सरकार का ही रहेगा। इसका उद्देश्य यह था कि सरकार की हिस्सेदारी घटने के बाद भी सरकारी बैंकों का निजीकरण नहीं होगा। वर्ष 1998 में बैंकिंग सुधारों पर गठित दूसरी नरसिम्हन समिति की सिफारिशों के अनुरूप यह प्रस्ताव रखा गया था। वर्ष 2014 में एक दूसरी समिति (जे पी नायक समिति) ने सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों में सरकार की हिस्सेदारी घटाकर 51 प्रतिशत से कम करने का सुझाव दिया था। राजग सरकार बैंकिंग क्षेत्र में व्यापक सुर पर सुधार पर विशेष जोर देता रहा है। जनवरी 2015 में सरकार ने पहला 'ज्ञान संगम' (सार्वजनिक क्षेत्र एवं वित्तीय संस्थानों के प्रमुखों की बैठक) का आयोजन किया था। 2015 में तत्कालीन वित्त मंत्री अरुण जेटली ने बैंकिंग क्षेत्र के लिए 'इंद्रधनुष योजना' की घोषणा की थी। इसके बाद फरवरी 2021 के बजट में सरकार ने आईडीबीआई बैंक के अलावा सार्वजनिक क्षेत्र के दो बैंकों और एक सामान्य जीवन बीमा कंपनी के निजीकरण की घोषणा की थी। मगर 2024 के चुनाव के बाद केंद्र में सत्ताधारी राजग गठबंधन में घटक दलों के बीच समीकरण बदल गया है। ऐसे में क्या सरकार सार्वजनिक क्षेत्र के बैंकों के निजीकरण पर आगे बढ़ पाएगी? इस बारे में पुख्ता तौर पर कुछ नहीं कहा जा सकता।

(लेखक जन स्मॉल फाइनैंस बैंक में वरिष्ठ सलाहकार हैं)

आपका पक्ष

सॉफ्टवेयर में चूक से थमी दुनिया

पिछले दिनों माइक्रोसॉफ्ट के सॉफ्टवेयर में तकनीकी गड़बड़ी आने के कारण पूरी दुनिया थम सी गई थी और लोगों को काफी परेशानियों का सामना करना पड़ा। भारत के साथ ही विश्व के कई देशों के हवाई अड्डों पर कंप्यूटर में खराबी के कारण उड़ानों में विलंब हुआ। बैंकों, शेयर बाजार तथा अन्य संस्थानों व प्रतिष्ठानों में भी तकनीकी खराबी के कारण काफी दिक्कतों का सामना करना पड़ा। आज तकनीकी युग में हम हर काम तकनीक की सहायता से ही कर रहे हैं। अगर यह कभी धोखा दे दे तो सारा काम रुक जाता है। अतः तकनीक के इस्तेमाल के साथ-साथ मैन्युअल काम के लिए भी तैयार रहने की जरूरत है। जैसे हवाई अड्डों में हाथ से लिख कर टिकट दिया गया और उड़ानें संचालित की गईं। अधिक तकनीक के इस्तेमाल के आदी होने से कभी भी धोखा खाने का डर बना रहता है।

मोहित कुमार, नई दिल्ली

सॉफ्टवेयर में चूक के कारण शुक्रवार को उड़ान में देरी से बेंगलूरु हवाई अड्डे पर यात्रियों की भीड़ जम गई

मॉनसून में भी कम बारिश चिंता की बात

विशेषज्ञ बता रहे हैं कि देश के कुछ राज्यों, हिमाचल प्रदेश, पंजाब और अन्य राज्यों में इस बार मॉनसून में अब तक बहुत कम बारिश हुई। इन राज्यों में लोग उमस भरी गर्मी से परेशान हैं। जुलाई और अगस्त देश के लगभग सभी राज्यों के लिए मॉनसून के महीने माने जाते हैं। अगस्त महीना मॉनसून का यौवनावस्था का होता है। इस बार भी पंजाब और अन्य कुछ राज्य मॉनसून को तरस रहे हैं। यहां उमस भरी गर्मी ने लोगों का जीना दुश्वार किया हुआ है। पंजाब में इस बार मॉनसून कमजोर ही दिख रहा है। यहां अब तक मॉनसून की बारिश कम हुई है। विचार करने वाली और चिंता की बात तो यह है कि आखिर पंजाब या अन्य राज्यों में मॉनसून क्यों कमजोर पड़ रहा है। कहीं यह भी ग्लोबल वार्मिंग के लक्षण तो नहीं है। कहीं इसका कारण घटती हरियाली और कंक्रीट के बढ़ते जंगलों की संख्या तो नहीं है। कम बारिश बहुत बड़ी चिंता की बात है क्योंकि कम बारिश से देश के बहुत से हिस्से सूखे की चपेट में आ सकते हैं। कम बारिश पंजाब में घटते भूजल के लिए और भी चिंताजनक है। अगर बारिश कम होगी तो इसका असर फसलों पर भी पड़ेगा। अगर देश में कृषि कम होगी तो इसका असर देश के जीडीपी और महंगाई पर भी जरूर पड़ेगा।

राजेश कुमार चौहान, जालंधर

पर्यावरण बचाने की जरूरत

देश की समृद्धि का या आर्थिक उन्नति का आधार सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) है। मगर हमारी समृद्धि का आधार प्रकृति जीव सम्पत होना चाहिए अर्थात पर्यावरणीय संसाधनों में कितनी वृद्धि हुई, प्रदूषण में कितनी कमी, कितने जंगल फिर से उगाए गए, पौधरोपण से जीवित बचे पौधों मे कितनी मात्रा में वृद्धि हुई। तभी हम प्रति व्यक्ति की आयु में वृद्धि और उसके खुशहाल स्वास्थ्य की कल्पना साकार कर सकते हैं। अगर जीडीपी बढ़ाने के चक्कर में हम जीव-जंतुओं और पशु-पक्षियों के रहने की जगह कम करते जाएंगे तो वे सभी गांवों-शहरों की तरफ कूच करेंगे जिससे उन जीव-जंतुओं पर मौजूद वायरस से इंसान संक्रमित होने से बचेगा नहीं।

डॉ विकास पंडित, बड़वानी

पाठक अपनी राय हमें इस पते पर भेज सकते हैं : संपादक, बिज़नेस स्टैंडर्ड, 4, बहादुर शाह जफ़र मार्ग, नई दिल्ली 110002. आप हमें ईमेल भी कर सकते हैं : lettershindi@bsmail.in
पत्र/ईमेल में अपना डाक पता और टेलीफोन नंबर अवश्य लिखें।

देश-दुनिया

फोटो - पीटीआई

कोलंबिया के बोगोटा में शनिवार को स्वतंत्रता दिवस के अवसर पर सेना ने परेड निकाली। कोलंबिया ने स्पेन से अपनी आजादी की 214वीं वर्षगांठ मनाई।

दैनिक जागरण
दया धर्म की जननी है

सार्थक काम की अपेक्षा

संसद के बजट सत्र के पहले आयोजित सर्वदलीय बैठक में शामिल सत्तापक्ष और विपक्ष के नेताओं ने संसद के सुचारु संचालन के संदर्भ में चाहे जो कुछ कहा हो, अंदेशा इसी बात का अधिक है कि यह सत्र पिछले सत्र की तरह हंगामेदार हो सकता है। ऐसा इसलिए, क्योंकि अब आम तौर पर यही होता है। चूंकि इस बार विपक्ष का संख्या बल अधिक है, इसलिए उसका आक्रामक होना स्वाभाविक है, लेकिन आक्रामकता का अर्थ यह नहीं हो सकता कि संसद को चलने ही न दिया जाए। दुर्भाग्य से अब ऐसा ही अधिक होता है और इसकी झलक संसद के पिछले सत्र में साफ तौर पर देखने को मिली थी। हालांकि कांग्रेस लोकसभा में 99 सीटों तक ही पहुंच सकी है, लेकिन वह ऐसा प्रदर्शित कर रही है जैसे वह भाजपा को परास्त कर उससे आगे निकल गई है। निःसंदेह संसद की कार्यवाही चलाना सत्तापक्ष की जिम्मेदारी है, लेकिन यदि विपक्ष यह ठान ले कि उसे सहयोग, समन्वय और संवाद की राह पर नहीं चलना है तो फिर सत्तापक्ष भी कुछ नहीं कर सकता।

संसद के इस सत्र में केवल बजट ही पेश नहीं होना है, बल्कि कुछ महत्वपूर्ण विधेयक भी प्रस्तुत होने हैं। इसके अतिरिक्त विपक्ष कुछ ज्वलंत विषयों पर चर्चा के लिए भी कमर कसे हुए है। निश्चित रूप से इन विषयों पर चर्चा होनी ही चाहिए। जहां विपक्ष का यह दायित्व है कि वह संसद में राष्ट्रीय महत्व के मुद्दों को उठाए वहीं सत्तापक्ष की भी यह जिम्मेदारी है कि वह इन मुद्दों पर चर्चा करने के लिए तैयार दिखे। देखना है कि ऐसा हो पाता है या नहीं। संसद के इस सत्र में सत्तापक्ष और विपक्ष के बीच जिन मुद्दों पर टकराव हो सकता है, उनमें लोकसभा का डिप्टी स्पीकर पद भी है। विपक्ष यह पद अपने लिए चाह रहा है, लेकिन सत्तापक्ष और विपक्ष के बीच जैसे संबंध हैं, उसमें इसके आसार कम ही हैं कि सरकार यह पद विपक्ष को देने के लिए तैयार होगी। हां, इसकी संभावना अवश्य है कि वह यह पद अपने सहयोगी दलों और विशेष रूप में टीडीपी अथवा जदयू में से किसी को दे सकती है। इसके आसार इसलिए भी हैं, क्योंकि इन दोनों दलों की ओर से अपने-अपने राज्यों के लिए विशेष दर्जे की मांग की जा सकती है। बिहार और आंध्र प्रदेश को केंद्र सरकार से कुछ विशेष सहायता की आवश्यकता हो सकती है, लेकिन इन राज्यों में सत्तारूढ़ दलों को एक तो नियम-कानूनों के दायरे में रहते हुए अपनी मांग करनी होगी और दूसरे, राष्ट्रीय हितों को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। यही अपेक्षा विपक्षी दलों से भी की जाती है। अब यदि विपक्षी दल कहीं अधिक संख्या बल से लैस हैं तब फिर उनसे और विशेष रूप से कांग्रेस से राष्ट्रीय हितों को प्राथमिकता देने और साथ ही एक राजनीतिक दल के रूप में परिपक्व व्यवहार करने की अपेक्षा है।

सख्ती जरूरी

झारखंड के स्वास्थ्य केंद्रों में सरकार दवा से लेकर कई तरह की सुविधाएं प्रदान कर रही है, लेकिन समस्या यह है कि अधिसंख्य केंद्रों में पर्याप्त संख्या में चिकित्सक ही उपलब्ध नहीं हैं और जहां हैं भी, गायब रहते हैं। स्वास्थ्य सचिव ने भी इसे माना है और इस स्थिति से निपटने के लिए चिकित्सकों की बायोमेट्रिक उपस्थिति अनिवार्य कर दिया है। साथ ही ऐसी व्यवस्था कर दी है कि अनुपस्थिति की जानकारी स्वतः अटेंडेंस क्रास वेरिफिकेशन मैनेजमेंट (एसीवीएमएस) पोर्टल पर चली जाएगी। इसके बाद संबंधित चिकित्सक या स्वास्थ्यकर्मी को एसएमएस के माध्यम से स्मार भेजा जाएगा। साथ ही 104 हेल्पलाइन में बैठे एजेंट काल कर उनसे अनुपस्थिति का कारण पूछेंगे। जवाब में यदि उनके द्वारा अवकाश में होने की बात कही जाती है तो उन्हें अवकाश लेने का प्रमाण वाट्सएप पर भेजना होगा। बहरहाल, सरकार के इस प्रयास की सराहना की जानी चाहिए। इससे इतर यह व्यवस्था तब कारगर होगी, जब इसका सख्ती से अनुपालन हो। इसमें सिविल सर्जनों और मेडिकल कालेजों के प्राचार्यों एवं अधीक्षकों की भी भूमिका अहम होगी। उन्हें नियमानुसार कार्रवाई भी करनी होगी। इसमें भेदभाव की प्रवृत्ति से इस व्यवस्था में दरार आएगी। हालांकि, स्वास्थ्य विभाग में यह भी बड़ी समस्या है कि अनधिकृत अनुपस्थिति पर अगर किसी चिकित्सक पर कार्रवाई होती है तो वह नौकरी ही छोड़ देता है। इसका समाधान भी निकालना होगा। चिकित्सकों को भी सोचना होगा कि उनकी अनुपस्थिति का खामियाजा मरीजों को भुगतना पड़ता है। इससे धरती के भगवान वाली उनकी छवि धूमिल होती है।

> चिकित्सकों के गायब रहने का खामियाजा मरीजों को भुगतना पड़ता है और धरती के भगवान वाली उनकी छवि धूमिल होती है

विकसित भारत की राह दिखाए बजट

तरुण गुप्त

केंद्रीय बजट ऐसे किसी संकल्प की अभिव्यक्ति होना चाहिए, जो हमें विकसित राष्ट्र की दिशा में आगे ले जाए

केंद्रीय बजट के साथ आम से लेकर खास लोगों की अपेक्षाओं का जुड़ा होना बहुत स्वाभाविक है। यही कारण है कि इस वार्षिक आयोजन के कुछ सप्ताह पहले से ही टिप्पणीकार विश्लेषकों से लेकर अर्थशास्त्री अपने आकलन भी करने लगते हैं। यह सही भी है, क्योंकि बजट केवल एक वित्तीय लेखाजोखा न होकर सरकार की नीतियों एवं नीयत की अभिव्यक्ति है। बजट वस्तुतः वस्तुस्थिति का आकलन करने के साथ ही वर्तमान वास्तविकता एवं भविष्य की आकांक्षाओं के बीच एक सेतु बनने की भी क्षमता रखता है। एक राष्ट्र के रूप में यह हमारा सामूहिक स्वप्न है कि वर्ष 2047 तक हम विकसित देशों की श्रेणी में शामिल हो पाएं। इस स्वप्न की पूर्ति के लिए हमें निम्न-मध्यम आय वाले विकासशील देश से उच्च प्रति व्यक्ति आमदनी वाले विकसित राष्ट्र के बीच की खाई को पाटना होगा। केंद्र और सभी राज्यों की सरकारों को अपने बजट में विभिन्न सामान्य उपायों-उपक्रमों के अतिरिक्त इस दिशा में आगे बढ़ने के प्रयास करने ही चाहिए।

कैसे करने से अधिक महत्ता इसकी है कि हमें करना क्या है। हमारी प्राथमिकताएं क्या हों? इसमें कोई संदेह नहीं कि आर्थिक वृद्धि प्रगति की पूर्व निर्धारित शर्त है, लेकिन यह स्वयं में विकास के लिए पर्याप्त आधार नहीं। यदि हम विकसित राष्ट्रों पर दृष्टि डालें तो पाएंगे कि वहां उत्कृष्ट इन्फ्रास्ट्रक्चर, स्वच्छता के उच्च मानदंडों, गुणवत्तापरक शिक्षा और बेहतर स्वास्थ्य मानकों को विशेष वरीयता दी जाती है। निःसंदेह, बीते कुछ वर्षों से देश में बुनियादी ढांचे का तीव्र गति से विकास हो रहा है। सत्य यह भी है इसके निर्माण के दौरान लोगों की सुरक्षा के साथ ही उसकी गुणवत्ता सुनिश्चित करना भी उतना ही आवश्यक है। यह मुद्दा वित्तीय आवंटन से अधिक प्रशासनिक जवाबदेही या निगरानी का है।

सर्वविदित है कि हमारे स्वच्छता मानक लचर बने हुए हैं। हमारे गांव, कस्बे और शहर विश्व में सर्वाधिक गंदगी भरे एवं प्रदूषण की मार झेलने वालों में से हैं। स्थानीय निकायों की दशा दयनीय है। उन्हें नियंत्रित करने की जिम्मेदारी जिन राज्य सरकारों पर है, वही उन्हें लेकर बेपरवाह दिखती हैं। परिणामस्वरूप, स्वच्छता से जुड़ा केंद्र सरकार का महत्वाकांक्षी अभियान अभी भी दूर की कौड़ी बना हुआ है। यदि विश्व की पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था स्वच्छता के बुनियादी मानकों को लागू करने में अक्षम दिखती है तो इसके पीछे संसाधनों की कमी का कारण नहीं हो सकता। स्वच्छता की लचर स्थिति को लेकर मंशा और आग्रह का अभाव हमें अपने आसपास ही दिख जाएगा। सार्वजनिक शिक्षा और स्वास्थ्य का हमारा ढांचा अक्षमता एवं मलिनता से चरमराया हुआ है। यहां राज्य की असफलता की भरपाई के लिए निजी क्षेत्र पर हमारी निर्भरता बढ़ गई है। इस मोर्चे पर मांग और आपूर्ति की स्थिति असंतुलित होती जा रही है। ऐसे में हैरानी नहीं कि शिक्षा और स्वास्थ्य में सेवाओं की गुणवत्ता निराशाजनक बनी हुई है।

अवधेश राजपूत

अवसर जिम्मेदार संस्थाएं अपनी अक्षमता के लिए संसाधनों की किल्लत पर दोषारोपण करती हैं। इस संदर्भ में कुछ हाल के उदाहरणों पर दृष्टि डालते हैं। मुंबई में पेट्रोल पंप परिसर में बिशालकाय होर्डिंग का गिरना, दिल्ली एयरपोर्ट कार पार्किंग की छत का हिस्सा गिर जाना, बिहार में सिलसिलेवार ढंग से पुलों का गिरना, मानसून में जलजमाव, नालों का पानी सड़क और घरों तक भर जाना, करंट लगने से मौत, मानव-पशु संघर्ष, कुत्तों के जानलेवा हमलों के साथ ही तेंदुए और बाघ जैसे जंगली जानवरों का बस्तियों तक पहुंचकर लोगों को निशाना बनाने की घटनाएं सामने आई हैं। प्रतीत होता है कि प्रतिकूल एवं विध्वंसक मौसमी परिघटनाओं ने बाकायदा अपना एक कैलेंडर बना लिया है। उदाहरण के तौर पर सर्दियों में गिरता पारा मौतों की संख्या बढ़ा रहा है तो गर्मियों में गर्म हवाओं की तपिश जिंदगियां लील रही है, सर्दियों की दस्तक के साथ वायु प्रदूषण सांसों पर भारी पड़ता है तो बर्सात से मच्छरों एवं उनसे जनित बीमारियों का उत्पात शुरू हो जाता है। वहीं, मानसून भी राहत से अधिक आफत लेकर आता है। हम खुद ही भ्रमित हैं कि भला किस मौसम के लिए प्रार्थना करें? क्या ऐसी अप्रिय स्थितियों के लिए वास्तव में संसाधनों की कमी जिम्मेदार है? इसका उत्तर तलाशें तो नीयत में खोट, ईमानदारी का अभाव एवं प्राथमिकताओं का गलत चुनाव स्पष्ट रूप से दिखेगा।

तमाम उम्मीदों के अतिरिक्त राज्य से सर्वाधिक अपेक्षा इस बात की होती है कि वह संरक्षक की भूमिका निभाए। हमारी पुलिस एवं न्यायपालिका अपर्याप्तता, अक्षमता एवं अभावग्रस्तता से त्रस्त हैं। पुलिस सुधार सभी का पसंदीदा विषय तो दिखता है, लेकिन किसी की जिम्मेदारी नहीं लगता। पुलिसकर्मियों की किल्लत से लेकर परिचालन स्वायत्तता, स्थानांतरण-प्रोन्नति-वेतन से जुड़ी नीतियों, बेहतर बुनियादी ढांचा, कानून के प्रवर्तन और अपराध की जांच को विलंब करने को लेकर हम बहुत प्रगति नहीं कर पाए हैं। न्यायपालिका में मुकदमों के बढ़ते अंबार की स्थिति छिपी नहीं है। किसी भी विकसित देश में न तो मुकदमों का इतना बोझ होगा और न ही इतने विचाराधीन कैदियों की संख्या होगी। हालात सुधारने के लिए अदालतों एवं न्यायाधीशों की संख्या बढ़ाना, तकनीक का समावेश जैसे व्यापक न्यायिक सुधारों की सख्त आवश्यकता है।

चूंकि इस चर्चा से जुड़े तमाम मुद्दे समवर्ती सूची का विषय हैं तो उसमें राज्य सरकारों की भूमिका और महत्वपूर्ण हो जाती है। उनकी सक्रियता के बिना अभीष्ट की प्राप्ति संभव नहीं। यहीं पर सहकारी संघवाद, डबल इंजन और ट्रिपल इंजन सरकार जैसे विचार प्रभावी होते हैं। विशेष रूप से उत्तर और पश्चिम भारत के अधिकांश हिस्सों में सभी स्तरों पर एक ही दल या समान विचारों वाले दलों की सरकार हैं तो क्या हम इन राज्यों में प्रत्येक स्तर पर आदर्श गवर्नेंस की अपेक्षा कर सकते हैं? हमें शिक्षा, स्वास्थ्य, बुनियादी ढांचा, जन-सुरक्षा, स्वच्छता, पुलिस और न्यायपालिका के लिए केंद्र और राज्य दोनों स्तरों पर अधिक संसाधन आवंटन की आवश्यकता है। बजट में इनके लिए प्रविधान अपने आप में पर्याप्त नहीं और उसके लिए बेहतर निगरानी एवं क्रियान्वयन भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं, फिर भी बजट में इनके लिए आवंटन बढ़ाना एक अच्छी पहल तो होगी ही।

इस बार केंद्रीय बजट का आकार करीब 50 लाख करोड़ रुपये के दायरे में हो सकता है। सभी राज्य सरकारों का सम्मिलित खर्च केंद्र के व्यय से भी अधिक है। इसमें से एक बड़ी राशि-वेतन, पेंशन और ब्याज भुगतान में खर्च होती है। इसके बावजूद हर साल इतनी बड़ी राशि खर्च करने के बाद लोग कार्यपालिका से बेहतर परिणामों के हकदार हैं। विभिन्न मानव विकास सूचकांकों पर हमारा प्रदर्शन ही हमारे विकास की यात्रा को निर्धारित करेगा। केंद्रीय बजट ऐसे किसी संकल्प की अभिव्यक्ति होना चाहिए, जो हमें सही दिशा में आगे ले जाए। हम उम्मीद करते हैं कि यह हमारे मार्ग को प्रकाशित कर पथप्रदर्शक बनेगा।

response@jagran.com

पेंशन प्रणाली में सुधार का इंतजार

डा. ब्रजेश कुमार तिवारी

जब संविधान सामाजिक सुरक्षा की बात करता है तो पेंशन को मुफ्त की रेवड़ी मानना सर्वथा अनुचित है

केंद्रीय वित्त मंत्री निर्मला सीतारमण ने पिछले वर्ष सरकारी कर्मचारियों के लिए राष्ट्रीय पेंशन प्रणाली (एनपीएस) में "सुधार" करने के लिए एक समिति के गठन की घोषणा की थी। सरकार ने यह कदम गैर भाजपा दलों द्वारा शासित राज्यों (छत्तीसगढ़, झारखंड, राजस्थान, पंजाब, कर्नाटक और हिमाचल प्रदेश) द्वारा पुरानी पेंशन योजना (ओपीएस) को अपनाने के बाद उठाया था, परंतु 18 माह बाद भी इस समिति की रिपोर्ट का कुछ अता-पता नहीं है। बीते कुछ समय से केंद्र एवं राज्य सरकारों के छह करोड़ से अधिक कर्मचारी एनपीएस को खत्म करने और पुरानी पेंशन योजना के तहत पेंशन बहाल करने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। ओपीएस को केंद्र सरकार ने 2004 में वित्तीय बोझ को ध्यान में रखते हुए खत्म कर दिया था। बाद में इसे राज्यों ने भी अपना लिया। ओपीएस के तहत कर्मचारियों को रिटायरमेंट के बाद उनके अंतिम वेतन का आधा हिस्सा पेंशन के तौर पर मिलता है। जबकि एनपीएस में कर्मचारी के मूल वेतन का 10 प्रतिशत हिस्सा काटा जाता है और सरकार भी उसके मूल वेतन का 14 प्रतिशत योगदान देती है, जिसे शेयर बाजार में लगाया जाता है। एनपीएस में महंगाई भत्ता और वेतन आयोग का फायदा नहीं मिलता है। नई पेंशन योजना शेयर बाजार आधारित है। इसका भुगतान बाजार पर निर्भर करता है। यह अमेरिकी माडल पर आधरित योजना है, जिसे आम भाषा में निजी पेंशन कह सकते हैं।

एनपीएस उन लोगों के लिए डिजाइन की गई थी, जो 21 से 25 वर्ष की आयु में नौकरी में शामिल होते हैं। इस तरह वे 35 से 40 वर्षों तक पेंशन फंड में योगदान करते, पर आज ज्यादातर लोगों को नौकरी देर से मिल रही है, जिससे वे पेंशन फंड में पर्याप्त समय तक योगदान नहीं कर पा रहे। आजकल तमाम विभागों में संविदा पर भर्ती होने और देर से नियमित होने के कारण भी कर्मचारियों की सेवानिवृत्ति महज 10-15 वर्षों में ही हो जा रही है। कई बार एनपीएस अकाउंट खुलने में ही वर्षों लग जाते हैं। इस अवधि में न तो कर्मचारी योगदान कर पाता है और न ही नियोक्ता। लिहाजा एनपीएस को लेकर कर्मचारियों की आशंका अब सच साबित हो रही है। दो लाख रुपये मासिक वेतन पाने वालों की पांच से 10 हजार रुपये तक ही पेंशन बन रही है। इससे वे अपने मासिक बिल का भुगतान एवं दवा का खर्च भी नहीं निकाल पा रहे हैं। वृद्धावस्था में छोटे-मोटे काम करने के लिए मजबूर हैं।

पुरानी पेंशन योजना की तेज होती मांग। फाइल

यह सच है कि केंद्र सरकार हर साल अपने कुल खर्च का बड़ा हिस्सा ब्याज के भुगतान पर खर्च करती है, जो वर्तमान में लगभग 20 प्रतिशत है। इतने बड़े वित्तीय बोझ के बावजूद सरकार को अपने कर्मचारियों को रिटायरमेंट के बाद बढ़ाये के समय बाजार के भरोसे नहीं छोड़ देना चाहिए। भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में सरकार अपने अधिभावक की भूमिका से नहीं बच सकती है। महत्वपूर्ण यह है कि जनसेवा के लिए खुद से आगे आए माननीयों ने संसद सहित राज्यों में अपने लिए सुरक्षित एवं स्थायी पेंशन योजना बनाकर रखी है तो फिर सरकारी कर्मचारियों को बाजार के हवाले क्यों किया जा रहा है? आंकड़ों के अनुसार गत 20 वर्षों में भारतीय सांसदों के वेतन एवं भत्तों में 1,250 प्रतिशत वृद्धि हुई है। आज मणिपुर में एक पूर्व विधायक को 70 हजार रुपये की मूल पेंशन मिलती है। मूल पेंशन में अन्य भत्ते जुड़ने के बाद यह राशि दो से तीन गुना बढ़ जाती है। दूसरी तरफ कठिन प्रतियोगिता से निकलकर नौकरी में आने के बाद सरकारी विभाग में पूरा जीवन खपा देने वालों का बुढ़ापा असुरक्षित है। आम तौर पर कोई भी नेता जितनी बार सांसद/विधायक बनता है, उसकी पेंशन उसी हिसाब से बढ़ती जाती है। यदि कोई विधायक और लोकसभा-राज्यसभा सदस्य, रह चुका है तो उसे तीनों की पेंशन मिलती है। संसद के दोनों सदनों में आमतौर पर हंगामा होता है, पर वेतन वृद्धि का निर्णय लेते समय विपक्ष और सत्ता पक्ष के बीच एक अस्वाभाविक एकता देखी जाती है।

जब देश का संविधान सामाजिक सुरक्षा का प्रविधान करता है तो पेंशन को 'प्रीबीज' (मुफ्त की रेवड़ी) मानना सर्वथा अनुचित है। इन्हीं कर्मचारियों के टैक्स से देश एवं प्रदेशों में कई लोकलुभावन योजनाएं चलाई जा रही हैं। निजी क्षेत्र में भी पेंशन फंड बनाने की जरूरत है जिससे वहां काम करने वाले कर्मचारी अपने भविष्य की लेकर सुरक्षित रह सकें। सरकार को कर्मचारियों की भावनाओं को समझना जरूरी है। सेवानिवृत्ति के बाद जब शरीर साथ छोड़ने लगता है तब परिजन भी उनको बोझ समझ लेते हैं। आज एकल ही चुके समाज में उन्हें सेवानिवृत्ति के बाद सबसे ज्यादा आर्थिक आवश्यकता है, जिससे वे आत्मसम्मान के साथ पारिवारिक और समाजिक जिम्मेदारियों को निभा सकें। ग्लोबल एक्चुअरी फर्म की मानें तो देश में 75 प्रतिशत कंपनियां शेयर बाजार और बांड मार्केट में उतार-चढ़ाव के कारण संशय की शिकार हैं। ऐसे में सरकारी कर्मचारी शेयर बाजार आधारित पेंशन पर कैसे विश्वास करें? इसे देखते हुए पेंशन योजना को लेकर सरकार को अपना विचार बदलना चाहिए। एक कल्याणकारी राज्य में सरकार को एक आदर्श नियोक्ता के रूप में कार्य करना चाहिए।

(लेखक जेएनयू के अटल स्कूल आफ मैनेजमेंट में प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

समय का महत्व

इंसान की दुर्बलता जहां उसके लिए मुश्किल स्थितियां खड़ी करती है, तो वहीं हौसला सहज-सरल एवं सकारात्मक बने रहने को प्रेरित करता है। मन की भूमि पर विचारों के बीज संभलकर डालें। जैसा बीज होगा, वैसे ही उसके फल एवं फूल होंगे। मन में किसी के लिए अच्छाई या बुराई के बीज बोने से पहले ध्यान रखें कि ये आपके भीतर ही जड़ें फैलाएंगे। उनकी सुगंधित या दूषित हवा में पहले आप सांस लेंगे। यही इस बात को तय करता है कि हम किस तरह के इंसान बनने की प्रक्रिया में हैं। कहावत है कि समय बड़ा बलवान है। इसलिए समय की कद्र करना जरूरी है। ऐसा न करने वाले समय सहित स्वयं के साथ अन्याय करते हैं, अपने भविष्य के लिए गहन अंधेरे को चुनते हैं।

जो व्यक्ति दुखी होता है, वह उत्साह की खो देता है। वह समय का अवमूल्यन करता है। ऐसा व्यक्ति कुछ क्षण में संपन्न होने वाले काम में बहुत लंबा समय लगा देता है। व्यक्ति पहले तो चिंतन करने में समय लगा देता है, फिर निर्णय करने में देरी कर देता है। निर्णय के बाद उसे क्रियान्वित करने में लंबा समय लगा देता है, फिर धीरे-धीरे काम को आगे बढ़ाता है। जीवन का सूत्र बहुत ही सरल है। सुबह जागने तथा रात को सोने के बीच में जितना हो सके स्वयं को व्यस्त रखें। समयबद्धता एक अच्छे आदमी का गुण होता है। जहां आदमी के जीवन में आलस्य आ जाता है, काम करने से जी चुराने लगता है, वहां कई बार समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। यदि श्रमशीलता एवं समयबद्धता के स्थान पर विलासिता एवं सुविधावाद अपना स्थान बना लेते हैं तो विकास अवरुद्ध हो जाता है। बिना उत्साह के महान उपलब्धि हासिल नहीं की जा सकती।

ललित गर्ग

सांस्कृतिक विविधता की समझ

ठेंद्रराज सुथार

बेंगलुरु में एक बुजुर्ग को माल में प्रवेश से रोक दिया गया, क्योंकि उसने धोती पहन रखी थी, जो एक पारंपरिक भारतीय परिधान है। यह घटना पहनावे के आधार पर भेदभाव करने की उस सतही मानसिकता को दर्शाती है, जो सभ्य समाज की रीढ़ बनने वाली समृद्ध सांस्कृतिक विविधता को कमजोर करती है। इसके मूल में यह गलत धारणा है कि पहनावा किसी व्यक्ति के मूल्य या स्थिति को निर्धारित करता है। यह मानसिकता औपनिवेशिक और वर्गवादी विचारधारा से पोषित है, जो पश्चिमी या आधुनिक पोशाक को परिष्कार और पारंपरिक कपड़ों को पिछड़ेपन के समान मानती है।

एक सच्चा सभ्य समाज वह होता है, जो विविधता को अपनाता है, व्यक्तिगत पसंद का सम्मान करता है और समावेशिता को बढ़ावा देता है। यह वह समाज नहीं है, जो दिखावे के मनमाने मानक लागू करता है या पहनावे के आधार पर भेदभाव करता है। जब हम लोगों को उनके कपड़ों से आंकते हैं, तो हम मानवता की अनदेखी करते हैं। दरअसल यह एक व्यापक सामाजिक समस्या का प्रतिबिंब है, जहां बाहरी दिखावे को अक्सर अनुचित महत्व दिया जाता है। किसी व्यक्ति का चरित्र और विचार उसके परिधानों की तुलना में उसकी पहचान से अधिक महत्वपूर्ण है।

> जब हम लोगों को उनके परिधान से आंकते हैं, तो हम मानवता की अनदेखी करते हैं

पारंपरिक पोशाक के खिलाफ भेदभाव करना भी सांस्कृतिक उन्मूलन का एक रूप है। यह उन समुदाय को हाशिये पर धकेल देता है, जो अपने पारंपरिक परिधान के माध्यम से अपनी सांस्कृतिक पहचान व्यक्त ही नहीं करते, बल्कि अपनी विरासत पर गर्व भी करते हैं। आधुनिकता की पश्चिमी पहनावे और परंपरा को पिछड़ेपन के बराबर मानने वाली मानसिकता न केवल पुरानी है, बल्कि हानिकारक भी है। यह अनावश्यक विभाजन पैदा करती है और पारंपरिक परिधान पहनने वालों में हीनता की भावना को बढ़ावा देती है। इस तरह के पूर्वाग्रहों को जारी रहने देकर हम समानता और सम्मान के आदर्शों पर खरा उतरने में विफल हो रहे हैं।

वैश्वीकृत दुनिया में सांस्कृतिक मतभेदों का सम्मान करने एक प्रबुद्ध समाज की पहचान होनी चाहिए, लेकिन हमें अभी भी एक ऐसे समाज का निर्माण करने में लंबा सफर तय करना है, जो सम्मान और समावेश की संस्कृति को बढ़ावा देता है और लोगों को उनके कपड़ों से नहीं, बल्कि उनके विचारों और कार्यों से आंकता है। यह समझना होगा कि किसी के पारंपरिक पहनावे के आधार पर उसके साथ भेदभाव करना मानवता का उपहास है जिसका आधुनिक समाज में कोई स्थान नहीं है। अब समय आ गया है कि हम इन पुराने पूर्वाग्रहों को त्याग दें और उस समृद्ध सांस्कृतिक विविधता को अपनाएं जो हमें जोड़ित बनाती है। तभी हम सही मायने में सभ्य होने का दावा कर सकते हैं।

(लेखक स्वतंत्र टिप्पणीकार हैं)

मेलबाक्स

मैन्यूफैक्चरिंग का विकास आवश्यक

'आम बजट से अपेक्षाएं' शीर्षक से लिखे आलेख में संजय गुप्त ने पिछले 10 साल से जीडीपी में मैन्यूफैक्चरिंग की हिस्सेदारी 15 प्रतिशत पर अटके रहने के कारणों पर विस्तार से प्रकाश डाला है। उन्होंने कहा है कि कोविड महामारी के बाद चीन के प्रति वैश्विक नाराजगी का हम फायदा नहीं उठा पाए, जिसके कारण वहां की बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भारत के बजाय दक्षिण पूर्व एशियाई देशों में जाना पसंद किया। लिहाजा इस बार के आम बजट में सरकार से अपेक्षा है कि मैन्यूफैक्चरिंग क्षेत्र को बढ़ावा देने की खातिर कुछ विशेष प्रविधान करेगी। हमारे देश में बड़े उद्योगों की आवश्यकता के लिए छोटे-मोटे कल-पुर्जे और कच्चे माल विदेश से मंगाने पड़ते हैं, जबकि इन वस्तुओं का उत्पादन एमएसएमई सेक्टर में आसानी से हो सकता है, लेकिन इस सेक्टर को बढ़ावा देने में सबसे बड़ी बाधा हैं पुराने श्रम कानून और शोध एवं विकास में अपर्याप्त निवेश। आमतौर पर हम बेरोजगारी और महंगाई का रोना तो खूब रोते हैं, लेकिन इस पर अंकुश लगाने वाले कारकों पर ध्यान नहीं देते हैं, जबकि लघु, मध्यम और बड़े उद्योगों के समानांतर विकास से बेरोजगारी दूर होगी। देश में उत्पादन सस्ता होगा तो महंगाई पर काबू पाना भी आसान होगा। ऐसे में इस बार के आम बजट में इन बातों का ध्यान रखना जरूरी है। साथ ही उद्यमियों को प्रोत्साहन लायक वातावरण उपलब्ध कराने के तमाम उपाय किए जाने चाहिए। तभी हम देश की कुल जीडीपी में मैन्यूफैक्चरिंग क्षेत्र के योगदान को 15 प्रतिशत से बढ़ाकर 25 प्रतिशत तक ले जा सकेंगे।

मुकेश कुमार मनन, पटना

कांवड़ मार्ग पर नाम का षड्यंत्र

कांवड़ यात्रा मार्ग पर मुस्लिम व्यापारियों द्वारा छद्म नाम से चलने वाले भोजनालय चिंताजनक हैं। पिछले कुछ समय से कट्टरपंथी मुस्लिम संगठन और राहुल गांधी जैसे और उनके समर्थक नेता हिंदू और सनातन विरोध को अपनी राजनीति बना चुके हैं। ऐसे बहुत से मुस्लिम कलाकार हिंदू एवं धार्मिक किरदार निभाते हैं, परंतु उनके लिए कोई विरोध नहीं होता और वे लोकप्रिय हैं। मुस्लिम नाम से ही यदि हिंदू धर्म का सम्मान दिखाते और व्यापार चलाते तो कोई आपत्ति नहीं होती। इस विवाद के लिए कट्टरपंथी मुस्लिम संगठन और हिसंक हिंदू विमर्श चलाने वाले राजनीतिक दल जिम्मेदार हैं। यदि हिंदू हिसंक होता तो क्या मुस्लिम व्यापारी छद्म नाम से ही सही कांवड़ यात्रा मार्ग पर व्यापार चला रहे होते?

विनोद जौहरी, दिल्ली

असली नाम बताना गलत कैसे?

सावन के पवित्र मास में कांवड़ यात्राएं देशभर के माहौल को धार्मिक बनाती हैं। शिव भक्त कांवड़ियों की सुविधा के लिए यूपी एवं उत्तराखंड सरकार ने सभी ढाबों के नाम सही लिखने का आदेश दिया है। दोनों सरकारों द्वारा ऐसा आदेश आते ही विपक्ष एवं पक्ष के भी कुछ दल इसका विरोध करने लगे हैं। अब सोचने की बात यह है कि ये दल इस निर्णय को गलत क्यों बता रहे हैं, जबकि पहचान छिपाकर व्यापार करना तो एक प्रकार का धोखा है, जो अपराध की श्रेणी में आता है। नाम बताने के निर्णय का विरोध करने वाले सभी दलों को केवल मुस्लिम वोट चाहिए। एक धर्म का वोट पाने के लिए के सही गलत का भी निर्णय ये लोग नहीं कर पाते हैं। इन सभी से पूछा जाए कि आखिर क्यों ढाबा संचालक एवं अन्य बिक्री करने वालों को नाम नहीं बताना चाहिए? सरकार के इस निर्णय को ध्यान से देखेंगे तो समझ आएगा कि यह मुस्लिम विरोधी नहीं है, बल्कि जो शिवभक्त सैकड़ों किलोमीटर चलकर पैदल कांवड़ लाते हैं, उनको रास्ते में खाने की आवश्यकता पड़ती है। इससे उनके साथ धोखा नहीं होगा और उनकी धार्मिक भावनाएं आहत नहीं होंगी। वैसे भी खरीदने वाले को भारतीय संविधान पूरा अधिकार देता है कि बेचने वाले की जानकारी हासिल करे। संविधान संविधान करने वाला विपक्ष आखिर अब क्यों संविधान का उल्लंघन कर रहा है।

ललित शंकर, गाजियाबाद

इस स्तंभ में किसी भी विषय पर राय व्यक्त करने अथवा दैनिक जागरण के राष्ट्रीय संस्करण पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए पाठकगण सादर आमंत्रित हैं। आप हमें पत्र भेजने के साथ ई-मेल भी कर सकते हैं।
अपने पत्र इस पते पर भेजें :
दैनिक जागरण, राष्ट्रीय संस्करण,
डी-210-211, सेक्टर-63, नोएडा
ई-मेल : mailbox@jagran.com

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त, पूर्व प्रधान संपादक-स्व. नरेन्द्र मोहन, नॉन एग्जीक्यूटिव चेयरमैन-महेन्द्र मोहन गुप्त, प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग, रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (राष्ट्रीय संस्करण) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 011-43166300, नोएडा कार्यालय : 0120-4615800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No. DELHIN/2017/74721 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई/रेल शुल्क ₹-2 अतिरिक्त।
****

कल्पमेधा

मुझे ऐसी हर चीज से नफरत है, जो सत्य से विमुख है। अच्छाई की ओर मनुष्य अच्छाई के तरीके से ही आ सकता है, हिंसा से नहीं।

– पास्तरनाक

गरिमा बनाम गुनाह

संवैधानिक पदों का निर्वाह करने वाले लोगों को आपराधिक मामलों में सुनवाई, सजा आदि से इसलिए संरक्षण प्रदान किया गया है कि इससे उस पद की गरिमा आहत हो सकती है। ऐसे लोगों से भी यह स्वाभाविक अपेक्षा रहती है कि वे उस पद की गरिमा के अनुरूप आचरण करें। मगर इस तकाजे की कई बार अनदेखी की जाती है। खासकर राज्यपालों के कार्य और व्यवहार को लेकर अनेक मौकों पर अंगुलियां उठी हैं। पश्चिम बंगाल के राज्यपाल पर राजभवन में काम करने वाली एक महिला ने आरोप लगाया कि उन्होंने उसका यौन उत्पीड़न किया और राजभवन के अधिकारियों ने उसे राजभवन में बंधक बनाए रखा। मामला उच्च न्यायालय तक पहुंच गया। अदालत ने कहा कि राज्यपाल को संविधान के अनुच्छेद 361 के तहत आपराधिक मामलों में संरक्षण प्राप्त है। उन पर तब तक कोई मुकदमा नहीं चलाया जा सकता, जब तक वे अपने पद पर हैं। तब पीड़िता ने सर्वोच्च न्यायालय में गुहार लगाई कि अनुच्छेद 361 के खंड दो में राज्यपालों को दी गई छूट में मामले की जांच पर रोक का कोई उल्लेख नहीं है। यौन उत्पीड़न जैसे मामलों में जांच में देरी पीड़िता को न्याय दिलाने में बाधा है। सर्वोच्च न्यायालय इस मामले के मद्देनजर अनुच्छेद 361 की समीक्षा को राजी हो गया है।

सर्वोच्च न्यायालय ने अनेक मामलों में संवैधानिक प्रावधानों की व्याख्या कर मनमानी लाभ लेने वालों पर नकेल कसी है, इसलिए इस मामले में भी लोगों को उम्मीद बनी है कि संवैधानिक संरक्षण की आड़ में राज्यपालों के अपने पद की गरिमा के प्रतिकूल व्यवहारों पर रोक लगाने का कोई व्यावहारिक रास्ता निकल सकेगा। साथ ही इस सिद्धांत की रक्षा होगी कि कानून की नजर में सभी बराबर हैं। पिछले कुछ वर्षों में जिस तरह राज्य सरकारों और राज्यपालों के बीच टकराव के अनेक मौके देखे गए और उनमें से कई में सर्वोच्च न्यायालय ने राज्यपाल के अधिकारों की व्याख्या करते हुए उनकी राजनीतिक सक्रियता पर विराम लगाया, उससे भी सर्वोच्च न्यायालय के ताजा कदम पर सबकी नजर रहेगी। यों राज्यपालों की नियुक्तियों को लेकर ही लंबे समय से सवाल उठते रहे हैं। सक्रिय राजनीति में लंबा समय बिता चुके लोगों को राज्यपाल पद की जम्मेदारी सौंपी जाती है, तो वे राजभवन में रहते हुए भी अपने दल और केंद्र सरकार की इच्छाओं के अनुरूप काम करते देखे जाते हैं। यही वजह है कि जहां उन्हें राज्य की चुनी हुई सरकार के साथ तालमेल बिठा कर फैसले करने चाहिए, वे नाहक उसके काम में अड़ंगा लगाना शुरू कर देते हैं। पश्चिम बंगाल में भी लंबे समय से यही देखा जा रहा है। इसी आधार पर राज्यपाल शुरू में अपने ऊपर लगे आरोप को राज्य सरकार की साजिश कह कर खारिज करने का प्रयास करते रहे। मगर मामला इतना हल्का है नहीं।

किसी राज्यपाल पर छेड़छाड़ और यौन उत्पीड़न का आरोप उस पद की गरिमा को चोट पहुंचाने जैसा है। ऐसे मामलों की सच्चाई तो किसी भी हाल में उजागर होनी चाहिए। उसकी जांच को केवल इसलिए नहीं रोक दिया जाना चाहिए कि राज्यपाल को आपराधिक मामलों में संवैधानिक संरक्षण प्राप्त है। लेकिन अगर राज्यपाल के अधिकारों को ऊपर रखा जाएगा, तो आरोप लगाने वाली महिला के न्याय के अधिकार की रक्षा कैसे हो पाएगी। इन्हीं सब सवालों के मद्देनजर सर्वोच्च न्यायालय राज्यपाल को मिले संरक्षण की समीक्षा करेगा। स्वाभाविक अपेक्षा है कि 'कानून की नजर में सब बराबर हैं' का सिद्धांत सर्वोपरि माना जाएगा।

आंदोलन और हिंसा

बांग्लादेश में आरक्षण विरोधी आंदोलन के हिंसक रुख अख्तियार कर लेने से वहां की सरकार के सामने एक बड़ी चुनौती खड़ी हो गई है। वहां के युवा न तो पुलिस-प्रशासन की बात सुनने को तैयार हैं और न प्रधानमंत्री शेख हसीना के अनुरोध और दलील का उन पर कोई असर हो रहा है। प्रदर्शन के दौरान हिंसा से अब तक सौ से ज्यादा लोगों की जान जा चुकी है और सैकड़ों घायल हुए हैं। हालात इस कदर बिगड़ गए हैं कि पूरे देश में कर्फ्यू लगाना पड़ा और उग्र प्रदर्शनकारियों को 'देखते ही गोली मारने' के आदेश दे दिए गए हैं। ऐसे में वहां रह रहे भारत, नेपाल और भूटान समेत अन्य देशों के लोगों को अपनी सुरक्षा की चिंता सताने लगी है। भारतीय विदेश मंत्रालय के मुतबिक, बांग्लादेश में करीब पंद्रह हजार भारतीयों के होने का अनुमान है। इनमें लगभग साढ़े आठ हजार विद्यार्थी हैं। अब तक एक हजार से अधिक विद्यार्थियों समेत 4,500 से ज्यादा भारतीय स्वदेश लौट आए हैं। केंद्र सरकार की ओर से बाकी भारतीय नागरिकों को सुरक्षित वापस लाने के प्रयास जारी हैं। इस बीच, बांग्लादेश-भारत सीमा पर सतर्कता बढ़ाने की मांग भी उठने लगी है।

दरअसल, बांग्लादेश में हिंसक आंदोलन पर उतरे युवा उस व्यवस्था को समाप्त करने की मांग कर रहे हैं, जिसके तहत वर्ष 1971 में पाकिस्तान के खिलाफ बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम में लड़ने वाले पूर्व सैनिकों के आश्रितों को सरकारी नौकरियों में तीस फीसद तक आरक्षण का प्रावधान है। प्रदर्शनकारियों का तर्क है कि आरक्षण की इस व्यवस्था के जरिए प्रधानमंत्री शेख हसीना के समर्थकों को लाभ पहुंचाया जा रहा है। गौरतलब है कि शेख हसीना की अवामी लीग पार्टी ने मुक्ति संग्राम आंदोलन का नेतृत्व किया था। प्रधानमंत्री शेख हसीना का कहना है कि युद्ध में भाग लेने वालों को सम्मान मिलना चाहिए, भले वे किसी भी राजनीतिक संगठन से जुड़े हों। बांग्लादेश सरकार और प्रदर्शनकारियों की दलीलें अपनी जगह हैं, लेकिन क्या अपनी मांगों को मनवाने की हिंसा ही एकमात्र उपाय है? जहां प्रदर्शनकारियों को शांतिपूर्वक अपनी बात सरकार के समक्ष रखनी चाहिए, वहीं सरकार को चाहिए कि सड़कों पर उतरे युवाओं को किसी तरह भरोसे में ले, ताकि पहले हिंसा थमे।

वन्य जीवन पर गहराता संकट

वन्य जीवन पर गहराता संकट पर्यावरण के साथ-साथ भाषा और संस्कृति को भी नष्ट कर रहा है। कुछ वर्ष पहले हुए एक अध्ययन में दावा किया गया था कि जैवविविधता की हानि दुनिया में भाषाओं और संस्कृतियों के नष्ट होने के लिए जिम्मेदार है।

रोहित कौशिक

वन्य जीवों पर होने वाली क्रूरता से जाहिर है कि हम इस प्रगतिशील दौर में सिर्फ सभ्यता का मुखौटा लगाए हुए हैं। यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि आज वन्य जीवों पर विभिन्न तौर-तरीकों से संकट के बादल मंडरा रहे हैं। भारत समेत संपूर्ण विश्व में वन्य जीवों की संख्या तेजी से घट रही है। इससे हमारे पर्यावरण के लिए नित नई समस्याएं पैदा हो रही हैं। अपने स्वार्थ के चलते मनुष्य द्वारा किए गए प्राकृतिक दोहन का नतीजा यह हुआ कि बीते चालीस वर्षों में पशु-पक्षियों की संख्या घटकर एक तिहाई रह गई। दरअसल, समृद्ध वन्य जीवन पर्यावरण को पोषकता तो प्रदान करता ही है, हमारे जीवन पर भी सकारात्मक प्रभाव डालता है। विडंबना है कि वन्य जीवों के संकट को देखते हुए भी हम अपनी जीवन-शैली को बदलने के लिए तैयार नहीं हैं।

वन्य जीवन पर गहराता संकट पर्यावरण के साथ-साथ भाषा और संस्कृति को भी नष्ट कर रहा है। कुछ वर्ष पहले हुए एक अध्ययन में दावा किया गया था कि जैवविविधता की हानि दुनिया में भाषाओं और संस्कृतियों के नष्ट होने के लिए जिम्मेदार है। अमेरिका की पेन स्टेट यूनिवर्सिटी के शोधकर्ताओं ने अपने अध्ययन में पाया था कि पृथ्वी के जैवविविधताओं वाले उच्च क्षेत्रों में उच्च भाषाई विविधता भी होती है। यहां तक कि विश्व की सत्तर फीसद भाषाएं उच्च जैवविविधता वाले स्थलों पर पाई जाती हैं। आंकड़े बताते हैं कि इन प्रमुख पर्यावरणीय क्षेत्रों में समय के साथ संस्कृति और भाषाओं के स्तर में गिरावट आई है। शोध प्रमुख लैरी गोरेफ्ला के अनुसार हमने ताजा भाषाई आंकड़ों के उपयोग से इस बारे में गहराई से जानने का प्रयास किया कि भाषाओं और जैवविविधता का आपसी संबंध क्या है। साथ ही यह समझने की कोशिश की कि भाषा का भौगोलिक रूप से विस्तार कैसा है। दरअसल, इस दौर में जैवविविधता, भाषा और संस्कृति के साथ-साथ पर्यावरण पर जिस तरह से प्रभाव डाल रही है उससे संकेत मिलता है कि भविष्य में हमें अनेक खतरों का सामना करना पड़ेगा।

दरअसल, पशु-पक्षी अपने प्राकृतिक आवास में ही अपने आप को सुरक्षित महसूस करते हैं। प्राकृतिक आवास में ही इनकी जैविक क्रियाओं में संतुलन बना रहता है। यह दुर्भाग्यपूर्ण ही है कि इस दौर में विभिन्न कारणों से पक्षियों का प्राकृतिक आवास उजड़ता जा रहा है। बढ़ते शहरीकरण और उद्योगीकरण के कारण वृक्ष लगातार कम होते जा रहे हैं। बाग-बगीचे उजाड़ कर इन जगहों पर खेती-बाड़ी की जा रही है। जलीय पक्षियों का प्राकृतिक आवास भी सुरक्षित नहीं बचा है। इन्हीं सब कारणों से किसी एक निश्चित जगह पर स्थापित होने के लिए पक्षियों के बीच प्रतिस्पर्धा बढ़ती जा रही है। एक ओर पक्षी मानवीय लोभ की भेंट चढ़ रहे हैं, तो दूसरी ओर जलवायु परिवर्तन के कारण इनकी संख्या लगातार घट रही है।

इससे बड़ी विडंबना और क्या हो सकती है कि तमाम नियम-कानूनों के बावजूद पक्षियों का शिकार और अवैध व्यापार किया जा रहा है।

लोग सजावट, मनोरंजन और घर की शान बढ़ाने के लिए तोते तथा रंग-बिरंगी गौरैया जैसे पक्षियों को पिंजरों में कैद रखते हैं। इसके साथ ही तीतर जैसे पक्षियों का शिकार किया जाता है। पक्षी विभिन्न रसायनों और जहरीले पदार्थों के प्रति अतिसंवेदनशील होते हैं। ऐसे पदार्थ भोजन या फिर पक्षियों की त्वचा के माध्यम से पक्षियों के अंदर पहुंचकर उनकी मौत का कारण बनते हैं। विभिन्न कीटनाशक और खर-पतवार खत्म करने वाले रसायन पक्षियों के लिए बहुत खतरनाक सिद्ध हो रहे हैं। मोर जैसे पक्षी कीटनाशकों की वजह से काल के गाल में समा रहे हैं। पर्यावरण को स्वच्छ रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने वाला गिद्ध पशुओं को दी जाने वाली दर्द निवारक दवा की वजह से मौत का शिकार हो रहा है। गिद्ध मरे हुए पशुओं का मांस खाकर पर्यावरण साफ रखने में मदद करता है। पशुओं को दी जाने वाली दर्द निवारक दवा के अंश मरने के बाद भी पशुओं के शरीर में रह जाते हैं। जब इन मरे हुए पशुओं को गिद्ध खाते हैं तो यह दवा गिद्धों के शरीर में पहुंचकर उनकी मौत का कारण बनती है।

> हम अपने बगीचों में सुंदरता बढ़ाने के लिए विदेशी या फिर ऐसे पौधों को ज्यादा उगाने लगे हैं, जो प्राकृतिक रूप से उस जगह पर नहीं उगते हैं। ऐसे पौधे स्थानीय पौधों की तुलना में उस जगह पर रहने वाले कीट-पतंगों को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर पाते हैं। साथ ही, इन पौधों को ज्यादा रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक रसायनों की आवश्यकता होती है। ये रसायन वातावरण को प्रदूषित कर लाभकारी सूक्ष्मजीवों और कीट-पतंगों को भी खत्म कर देते हैं। ऐसी स्थिति में गौरैया जैसे पक्षियों के लिए भोजन की कमी हो जाती है।

यह दुर्भाग्यपूर्ण ही है कि इस दौर में हमारे घर-आंगन में गौरैया कहीं दिखाई नहीं देती है। वैज्ञानिकों का मानना है कि भोजन में कमी, घोंसलों के निर्माण के लिए उचित जगह न मिल पाना तथा माइक्रोवेव प्रदूषण जैसे कारक गौरैया की घटती संख्या के लिए जिम्मेदार हैं। शुरुआती पंद्रह दिनों में गौरैया के बच्चों का भोजन मुख्य रूप से कीट-पतंगे ही होते हैं। वैज्ञानिकों का मानना है कि गौरैया के बच्चों के आसपास भोजन के रूप में कीट-पतंगों की संख्या कम होने के कारण उनकी मृत्यु दर बढ़ रही है।

दरअसल, इस दौर में हम अपने बगीचों में सुंदरता बढ़ाने के लिए विदेशी या फिर ऐसे पौधों को ज्यादा उगाने लगे हैं, जो प्राकृतिक रूप से उस जगह पर नहीं उगते हैं। ऐसे पौधे स्थानीय पौधों की तुलना में उस जगह पर रहने वाले कीट-पतंगों को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर पाते हैं। साथ ही, इन पौधों को ज्यादा रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक रसायनों की आवश्यकता होती है। ये रसायन वातावरण को प्रदूषित कर लाभकारी सूक्ष्मजीवों और कीट-पतंगों को भी खत्म कर देते हैं। ऐसी स्थिति में गौरैया जैसे पक्षियों के लिए भोजन की कमी हो जाती है। इसलिए आज आवश्यकता है कि हम अपने आसपास स्थानीय पौधों को ज्यादा उगाएं। ऐसे पौधों को रासायनिक उर्वरक और कीटनाशक रसायनों की ज्यादा जरूरत नहीं पड़ती और वे स्थानीय कीट-पतंगों को अपनी ओर आकर्षित करने में भी सफल रहते हैं।

इस दौर में गौरैया जैसे पक्षियों के साथ-साथ तोते पर भी संकट के बादल मंडरा रहे हैं। गौरतलब है कि विश्व में तोते की लगभग 330 प्रजातियां ज्ञात हैं। अगले सौ सालों में इनमें से एक तिहाई प्रजातियों के विलुप्त होने का अनुमान है। भारत में जिन पक्षियों के अस्तित्व पर सबसे अधिक खतरा मंडरा रहा है उनमें उपरोक्त पक्षियों के अलावा ग्रेट इंडियन बस्टर्ड, गुलाबी सिर वाली बत्तख, हिमालयी बटेर, साइबेरियाई सारस, बंगाल फ्लेरिकन और उल्लू आदि प्रमुख हैं।

दरअसल, जब भी जीवों के संरक्षण की योजनाएं बनती हैं तो बाघ, शेर तथा हाथी जैसे बड़े जीवों के संरक्षण पर तो ध्यान दिया जाता है, लेकिन पक्षियों के संरक्षण को अपेक्षित महत्त्व नहीं दिया जाता है। वृक्षों की संख्या में वृद्धि, जैविक खेती को प्रोत्साहित तथा माइक्रोवेव प्रदूषण को कम कर-के काफी हद तक पक्षियों को विलुप्त होने से बचाया जा सकता है। पक्षियों के संरक्षण के लिए सरकार को भी कुछ ठोस योजनाएं बनानी होंगी। अब समय आ गया है कि सरकार और हम सब मिलकर जीवों को बचाने का सामूहिक प्रयास करें। हमें यह समझना होगा कि जीवों के प्रति क्रूरता स्वयं हमारे अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगा सकती है।

बराबरी के बजाय

अलका 'सोनी'

हमारे ग्रंथ और साहित्य हमेशा हमारा मार्गदर्शन करते रहे हैं। कहा जाता है कि जो महाभारत में लिखा है, वह हर चीज यहां घटित होती है। यह भी माना जाता है कि जो चीज महाभारत में नहीं है, वह कहीं नहीं होती। आज अपने आसपास हम विज्ञान के जितने भी चमत्कार देख रहे हैं, जितनी भी तरह की घटनाएं देख रहे हैं, अगर उन सबकी कथा किसी ग्रंथ में वर्णित हो, तो इसका कारण उसके रचयिता का दूरद्रष्टा और उनमें उच्च कोटि की कल्पनाशीलता का होना है। साहित्यकारों के बारे में कई बार ऐसा कहा जाता है। वे अपने समय की तो सोचते ही हैं, अपने समय से आगे की बात भी कह देते हैं। मसलन, करीब सवा सौ साल पहले हमारे एक महान साहित्यकार प्रेमचंद के विचार तत्कालीन समाज के साथ-साथ आज के समय के लिए भी कई स्तर पर प्रासंगिक हैं। उन्होंने स्त्री और पुरुष की प्रकृति की परिभाषा देते हुए 'गोदान' उपन्यास में कहा कि जब पुरुष में स्त्री के गुण आ जाते हैं, तो वह महात्मा बन जाता है। यानी पुरुष को स्वयं में थोड़ा नारीत्व का गुण लाना चाहिए! इसका तात्पर्य यह है कि अगर कोई पुरुष अपने पुरुषत्व का अहम छोड़कर थोड़ा कोमल और सुगढ़ हो जाए तो घर स्वर्ग हो जाता है।

दुनिया मेरे आगे

> अगर हम चाहते हैं कि आधी आबादी भी सम्मान के साथ जिए, तो सामाजिक नजरिए में बदलाव जरूरी है। इसकी शुरुआत घर से ही की जा सकती है। यह समाज हमसे ही है। हम जैसा होंगे, वैसा ही यह समाज भी बनेगा। अगर हम चाहते हैं कि हमारा समाज उन्नत हो, तो अपनी सोच भी उन्नत बनानी होगी।

देखा जाए तो हमारे यहां शुरू से ही घर और बच्चे संभालना औरतों के काम माने गए हैं। उनसे अक्सर एक ही समय में अच्छी पत्नी, मां, नर्स, शिक्षिका, कमाने वाली और गृहिणी बनने की अपेक्षा की जाती है। मगर महिलाओं का काम अक्सर अदृश्य होता है जो किसी को नजर ही नहीं आता। कुछ दशक पहले महिलाओं का जीवन और भी कठिन था। अपनी पेट की भूख भी वे तब शांत करती थीं, जब पुरुष परिवार खा चुका होता था। आज भी बहुत सारे परिवारों में यह प्रथा कायम है। जबकि घर भर के कामों के साथ-साथ खेती-बाड़ी में भी उन्हें लगना होता था। उन्हें भी सही खुराक की उतनी ही जरूरत होती है, जितना कि एक पुरुष को होती है।

यह सही है कि धीरे-धीरे समय के साथ बदलाव आना शुरू हुआ है। आज कई घरों में लड़के बेहिचक कामकाजी पत्नी के साथ घर के कामों में हाथ बंटाते नजर आ जाते हैं, लेकिन इनका अनुपात बहुत अच्छा नहीं है। खासकर तब, जब पत्नी गृहिणी हो। उनके घर के पुरुष घर के कामों में हाथ लगाना अपनी तौहीन समझते हैं। लेखिका जूलिया अल्वारेज महिलाओं की घरेलू भूमिका और परिवार में उनके योगदान पर अपनी कविता 'महिला के काम' में अपनी मां के बारे में बताती हैं कि कैसे एक गृहिणी के रूप में उनकी भूमिका ने कवयित्री के भविष्य के जीवन को प्रभावित किया। अपनी कविता में जूलिया अल्वारेज एक गृहिणी की भूमिका को कमतर नहीं आंकने का आग्रह करती हैं, क्योंकि यह उनकी कला और महानता दोनों है।

घर में सिर्फ एक महिला आराम और सहजता पैदा कर सकती है। वह जानती है कि चीजों को खूबसूरती से कैसे व्यवस्थित करना है, फूलदान कहां रखना है और घर को कैसे एक सुखद स्थान बनाना है। मगर उनके किए कार्यों और मेहनत के मूल्य के बारे में सोचना तो दूर, परिवार वाले उनका सम्मान तक करना जरूरी नहीं समझते।

अब इस समस्या का एक समाधान यह हो सकता है कि सभी महिलाओं को कामकाजी होना चाहिए। तभी उन्हें अपने घर के कामों में अन्य लोगों की मदद मिल सकती है। लेकिन यह भी ध्यान देने की बात है कि आज भी हमारे यहां कई महिलाएं योग्य होने के बाद भी घर से बाहर अपनी योग्यता के मुताबिक मिल सकने वाला अपना काम छोड़ देती हैं या शुरू ही नहीं करती हैं। उनके इस कदम को उठाने के मुख्य कारण बच्चों की परवरिश, घर के कामों और दफ्तर के बीच तालमेल न बिठा पाना ही होता है। वे दिन भर बाहर काम करके आने के बाद घर में भी एक आदर्श बहू की तरह काम करने और सबकी उम्मीदों पर खरा उतरने के दोहरे दबाव में जी रही होती हैं। इसका नतीजा उनकी नौकरी छूटने के रूप में दिखता है।

महिलाओं की नौकरी छूट जाना मामूली-सी बात माना जाता है। जबकि इस बात की जड़ें हमारे ही सामाजिक ताने-बाने से गहरे जुड़ी हैं। शुरू से ही लड़कों की परवरिश, लड़कियों से अलग तरह से की जाती है, जिससे उनके मन में बैठ जाता है कि बच्चे और घर संभालना औरतों के काम हैं। कुछ समय पहले एक परिचित के घर में महिला अपने तेरह साल के बेटे को चाय बनाना और मैगी उबालना सिखा रही थी। उसने इसका कारण बताया कि वह लड़का है और उसे भी यह सब सीखना चाहिए, ताकि वह घर के कामों का सम्मान करना सीखे। उसके दिमाग में ये न चढ़े कि यह सब केवल लड़कियों के काम हैं। जाहिर है, उसका जवाब आश्चर्यजनक रूप से प्रभावित करने वाला था। ऐसी सोच रखने वाले माता-पिता समाज को एक सही नजरिया देते हैं। महिलाओं के हिस्से आने वाले कार्यों के प्रति सम्मान जगाते हैं।

अगर हम चाहते हैं कि आधी आबादी भी सम्मान के साथ जिए तो सामाजिक नजरिए में बदलाव जरूरी है। इसकी शुरुआत घर से ही की जा सकती है। यह समाज हमसे ही है। हम जैसा होंगे, वैसा ही यह समाज भी बनेगा। अगर हम चाहते हैं कि हमारा समाज उन्नत हो, तो अपनी सोच भी उन्नत बनानी होगी। अपनी दृष्टि ऐसी रखनी होगी कि वह दूर तक जाकर हमारे रास्तों पर गिरे कंकड़-पत्थर को भी देख सके, ताकि हमें उन्हें फेंकने में मदद मिले।

विवेक के बरक्स

कभी वह समय था जब हमारे देश को सपेरों, जादू-टोने और अंधविश्वासियों का देश कहा जाता था। धीरे-धीरे समय बदला, विज्ञान ने तरक्की की, हमारे देश में कंप्यूटर आए, मोबाइल आए, बड़े-बड़े उपग्रिपुल बने, उच्चमार्ग बने। खेल, शिक्षा, विज्ञान के क्षेत्र में हमारे देश ने काफी तरक्की की, लेकिन इस सबके बावजूद हम आज भी अंधविश्वास में जकड़े हुए हैं। कोई भी आदमी अगर साधु-संन्यासियों वाला चोला धारण कर लेता है, तो हम भारतीय आंख बंद करके उसे महान का दर्जा दे देते हैं। जबकि कई बाबा लोगों से पैसा ऐंठने, छोटी बच्चियों से बलात्कार करने और हत्याओं के जुर्म में भी दोषी साबित हुए हैं, लेकिन जनता अभी भी सचेत नहीं हुई है। विज्ञान के इस युग में भी न जाने कैसे लोग इनका जूठा खा लेते हैं, उनके पैरों की धूल लेने के लिए भगदड़ मचा देते हैं, जिससे लोग कुचले भी जाते हैं। इतना नुकसान होने के बावजूद इस तरह के सत्संग होते रहते हैं और लाखों लोग वहां पहुंचते रहते हैं। हादसों के बाद कथित बाबा भाग जाते हैं, तब भी आम आदमी को यह नहीं समझ आता कि जो बाबा अपनी रक्षा नहीं कर सकता, वह हमारी रक्षा कैसे करेगा!

– चरनजीत अरोड़ा, नरेला, दिल्ली

प्रतिभा की दीवारें

कर्नाटक सरकार का कन्नड़ भाषियों को निजी क्षेत्रों में सौ फीसद आरक्षण देने का प्रस्ताव तर्करहित है। कर्नाटक की राजधानी बंगलुरु एक सूचना तकनीक नगरी आइटी हब है। वहां देश के अलग-अलग राज्यों और शहरों के लोग काम करते हैं। आइटी में काम करने वालों का कर्नाटक के आर्थिक विकास में बहुत बड़ा योगदान है। कोई भी प्रतिभा, योग्यता और हुनर किसी भी राज्य जाति, और धर्म की मोहताज नहीं होती। कर्नाटक सरकार का यह प्रस्ताव एक गलत परिपाटी को भी बढ़ावा देता है। अगर ऐसा होता तो संभावना है कि देश भर के आइटी पेशेवरों के सामने एक नई चुनौती खड़ी हो जाए। ऐसा लग रहा है कि कर्नाटक में नवनिर्वाचित कांग्रेस सरकार कन्नड़ लोगों को खुश कर आगामी चुनाव में अपनी जीत पक्की करना चाहती है। इससे केवल भेदभाव में बढ़ोतरी होगी। कर्नाटक सरकार के राजस्व में कमी आएगी, वह अलग। यह फैसला पूरे देश के युवाओं की प्रतिभा पर एक सवाल है।

– अभिलाषा गुप्ता, मोहाली

मुसीबत से पहले

'मुसीबत की बरसात' (संपादकीय, 10 जुलाई) पढ़ा। लगभग हर वर्ष का यह क्रम बन गया है कि बरसात के आगमन के साथ ही शहरों में पानी के साथ-साथ बाढ़ से बड़ी तबाही होती है। शहरों में हर तरफ पानी ही पानी नजर आने लगता है और शहर ठहर से जाते हैं। देश का बड़ा क्षेत्र ऐसा है जो हर साल बाढ़ की चपेट में आता है। बाढ़ के कहर से हर वर्ष काफी नुकसान होता है, जो नुकसान करोड़ों रुपयों तक चला जाता है। कई लोग इससे प्रभावित होते हैं। देश में प्राकृतिक आपदाओं के कुल नुकसान का बड़ा हिस्सा केवल बाढ़ से होता है। विडंबना है कि आज तक नियमित बाढ़ का कोई स्थायी हल नहीं निकाला जा सकता। आज जरूरत है कि बरसात से मुसीबत पैदा हो, इसलिए पहले शहरों में पानी निकासी की व्यवस्था अच्छी हो, बरसात से पहले ही तैयारी की जाए, क्योंकि बरसात तो हर साल आएगी।

– साजिद अली, चंदन नगर, इंदौर

घर का मोर्चा

सिमोन द बोउआ का कथन है कि 'स्त्री पैदा नहीं होती, बनाई जाती है।' प्रकृति ने स्त्री व पुरुष के बीच लैंगिक भेदभाव नहीं किया, बल्कि यह समाज की देन है। महिला सशक्तीकरण सिर्फ बड़ी-बड़ी बातें करने से नहीं हो सकती है, बल्कि इसकी शुरुआत घर से ही होनी चाहिए। लड़कियों की परवरिश ही इस ढंग से होनी चाहिए कि उन्हें हर वह अवसर प्राप्त हो, जो लड़कों को होती है। लड़कियों को ऐसे बोलना, हंसना और कपड़े पहनना चाहिए, इसकी जगह हम ये सोचें कि लड़कियों को कैसे साहसी, स्वावलंबी बनाया जाए और भावनाओं के साथ-साथ उनमें तार्किकता विकसित की जाए, ताकि वे हर निर्णय स्वयं ले सके। एक तरफ हम देवियों की पूजा करते हैं और दूसरी तरफ बात-बात पर महिलाओं के प्रति अपशब्द का प्रयोग करते हैं। इस दोहरी मानसिकता के साथ कभी भी महिलाओं की स्थिति बेहतर नहीं हो सकती है।

– रोशनी, वैशाली, बिहार

हमें लिखें, हमारा पता : edit.jansatta@expressindia.com | chaupal.jansatta@expressindia.com

www.readwhere.com

नवभारत टाइम्स

नवभारत टाइम्स । नई दिल्ली। सोमवार, 22 जुलाई 2024

IT आउटेज के सबक

कंप्यूटर की अचानक ब्लू होती स्क्रीन ने बीते शुक्रवार को हमें उस खतरे का आईना भर दिखाया, जिसके बारे में हम अनजान बने हुए थे। माइक्रोसॉफ्ट की सर्विस क्या ठप हुई, ऐसा लगा कि किसी ने दुनिया से उसकी रफ्तार ही छीन ली हो। इस घटना से बड़ा आर्थिक नुकसान हुआ। जरूरत है इससे सबक सीखने की ताकि फिर ऐसे हालात न बनें।

गलती किसकी | समस्या की वजह था साइबर सिक्योरिटी फर्म क्राउडस्ट्राइक का एक अपडेट। इस फर्म की सर्विस माइक्रोसॉफ्ट समेत तमाम बड़ी कंपनियां और ऑर्गनाइजेशन लेते हैं। क्राउडस्ट्राइक ने साइबर अटैक से निपटने के लिए एक सॉफ्टवेयर डिजाइन किया था, लेकिन इसमें कुछ गड़बड़ी हो गई। जब यह सॉफ्टवेयर अपडेट हुआ, तो सिस्टम क्रैश होने लगे, कंप्यूटर की स्क्रीन ब्लू दिखने लगी। इस गड़बड़ी का असर बैंकिंग और आईटी सेक्टर से लेकर एविएशन तक पर पड़ा। तमाम उड़ानें रद्द हो गईं और कई कंपनियों में काम ठप हो गया।

कंपनियों की जवाबदेही तय हो

जिम्मेदारी तय हो | इस मामले में सबसे बड़ा सवाल यही है कि क्या क्राउडस्ट्राइक ने अपने नए अपडेट का सही से टेस्ट किया था? कंपनी ने अपनी गलती मानी है, लेकिन क्या इतने से यह गारंटी मिल जाती है कि भविष्य में ऐसी घटना नहीं होगी? बात केवल एक क्राउडस्ट्राइक की नहीं है। हमें ऐसी पॉलिसी चाहिए, जो जवाबदेही तय करती हो।

मजबूरियां उजागर | अभी तक ऐसी सिचुएशन हमने हॉलिवुड फिल्मों में ही देखी थी, जहां कोई विलेन एक सिस्टम के जरिये पूरे देश की व्यवस्था को हिला देता है। माइक्रोसॉफ्ट आउटेज ने उस स्क्रिप्ट को हकीकत में ला दिया। साथ ही, इससे जाहिर हुआ कि हमारी तैयारी कितनी अधूरी है।

बैकअप प्लान | ऐसी किसी परिस्थिति के लिए हमारे पास बैकअप प्लान ही नहीं था। एक-एक करके विभिन्न सेवाएं ठप होती जा रही थीं और किसी को कुछ सूझ नहीं रहा था। दिल्ली-NCR में कई प्राइवेट अस्पतालों की सर्विस तक पर असर पड़ा। क्या हम यह जोखिम उठा सकते हैं कि किसी कंपनी का कोई अपडेट विश्व को यूं बंधक बना ले? यह भी गौर करने वाली बात है कि अगर किसी टेक्नॉलजी पर एक कंपनी का एकाधिकार होगा, तो यह आशंका बनी रहेगी कि उसकी कोई एक गलती सभी को खतरे में डाल दे।

भविष्य की तैयारी | नेटवर्क का जाल जैसे-जैसे घना होगा, वैसे-वैसे इस तरह के खतरे भी बढ़ेंगे। जिन सेक्टर में इंटरनेट का काम नहीं, वे इस शुक्रवार को भी बेपरवाह चलते रहे। हालांकि इसका यह कतई मतलब नहीं है कि टेक्नॉलजी से दूरी बना ली जाए। तकनीक तरक्की के लिए है, पर इससे जुड़े सभी पहलुओं की जानकारी और तैयारी होनी चाहिए। नेटवर्क के अपने फायदे हैं, लेकिन साथ में जोखिम भी। इस जोखिम को कम से कमतर करने के उपाय की जरूरत है।

चक्र-व्यू

जोते जाते लोग

राहुल पाण्डेय

धान राजा हमारे गांव के खेतों में बैठ चुके हैं। जिनके यहां अभी तक नहीं बैठे हैं, उनके यहां जुताई-हेंगाई चालू है। धान का खेत बनाने से पहले कम से कम दो बार तो जोतना होता है कि मिट्टी एकदम पलट जाए। फिर हेंगाना (हेंगा- लकड़ी का कम से कम दस मन भारी पटरा) होता है कि ढेला-ढुली सब फूट जाए और मिट्टी एकदम भुरभुरी हो जाए। इतनी भुरभुरी कि हाथ में उठाइए तो रुई का फाहा लगे। ऐसे खेत में मुझे चलना बहुत अच्छा लगता तो अम्मा झट से टोकतीं कि पाप है। खेत जोतते वक्त अक्सर मैं यही सोचता कि इंसान भी ऐसे ही जोता जाता है। एक बार नहीं, कई-कई बार जोता जाता है। बाद में शहर आया तो पाया कि यहां तो हर वक्त ही आदमी जुता हुआ होता है। और जैसे-जैसे उम्र बढ़ती जाती है, भुरभुरा होता जाता है। बुजुर्ग यूं ही रुई के फाहे जैसे नहीं लगते। जीवन भर जुतने और हेंगाए जाने के बाद आखिरकार वो रुई का फाहा बन जाते हैं। एक दिन हवा चली और फाहा उड़ गया। कबीर ने कहा था कि 'माली आवत देखि के, कलियां करैं पुकार। फूली-फूली चुनि गई, काल्हि हमारी बार।' कबीर साहब से लाख मुआफी के साथ मैं कहता हूं, 'हेंगा आवत देखि के, ढेले करैं पुकार। बड़ा-बड़ा सब फूट चला, काल्हि हमारी बार।' यानी सम तो सबको होना है, आज नहीं तो कल।

जब खेत में सब सम हो जाता है तो उसमें पानी भरा जाता है। इधर खेत में पानी भर रहा है, उधर स्त्रियां गाते हुए बेरन की गड्डी बना रही हैं। गीतों में धान आ चुका है। धान बैठाने से पहले मेरी ओर तो ग्राम देवता की ही पूजा करते हैं, पर अलग-अलग क्षेत्रों में यह अलग-अलग तरीके से हो सकती है। बेरन बैठाने वाले कई किसान जिस देवता को मानते हैं, भले वे किसी भी धर्म के हों, आसमान की ओर दो कली बेरन उठाकर उसी से प्रार्थना करते हैं। ऐसा लगता है कि धान के अलग से कोई देवता नहीं होते। जब भात का ही कोई धर्म नहीं होता तो देवता कैसे हो सकते हैं! कभी-कभी तो मुझे लगता है कि धान खुद ही भगवान है! कहते हैं कि ईश्वर के पास से भीनी-भीनी मदहोश कर देने वाली खुशबू आती है। जब धान का फूल फूटता है, तब भी ऐसी ही खुशबू आती है। जैसे कोई तालाब के किनारे महक वाला भात पका रहा हो। यह खुशबू देवताओं को भी प्रिय है। जड़हन धान (जाड़े में पकने वाला) उन्हें चढ़ाने वाली बेशकीमती चीजों में सबसे प्रमुख है। इसीलिए इंसान भी इसे खाकर स्वर्गिक अनुभव करता रहा है। महाकवि घाघ तो सैकड़ों साल पहले ही कह गए थे- 'अरहर दाल, जड़हन का भात, गागल निबुआ औ घिउ तात। कहैं घाघ तब सबही झुठ, उहां छोड़ि इहैं बैकुंठ।' मतलब, दाल-भात, नींबू-घी हो तो स्वर्ग यहीं है।

एकदा

फ्रेंकलिन का लक्ष्य

वैज्ञानिक बेंजामिन फ्रेंकलिन का बचपन मुश्किलों से भरा था। वह अपने माता-पिता के 17 बच्चों में से 15वें नंबर की संतान थे। उन्होंने मात्र 17 साल की उम्र में अपना शहर छोड़ दिया। वह बोस्टन से न्यू यॉर्क चले गए। फिर वहां से फिलाडेल्फिया गए, जहां उन्हें एक प्रेस में नौकरी मिल गई। वहां काम करने के साथ-साथ वह अध्ययन भी करते थे। पढ़ाई से उन्हें बहुत प्रेम था। इधर उनके माता-पिता चिंतित थे कि उनका बेटा न जाने किस हाल में है? उनके बहनोई होम्स ने उनका पता-ठिकाना किसी तरह निकाल ही लिया और एक आग्रह भरा पत्र लिखा कि वह घर लौट आएं। बेंजामिन पत्र पढ़कर थोड़ी देर के लिए दुविधा में पड़ गए। उनके सामने माता-पिता का चेहरा घूम गया। बचपन की स्मृतियां घूम गईं, लेकिन तभी उन्हें अपना लक्ष्य याद आया। उन्होंने सोचा कि घर लौटकर तो वह बस अपने परिवार को संतुष्ट करेंगे, लेकिन विज्ञान के क्षेत्र में अपने काम से वह पूरी दुनिया को खुशी दे सकते हैं। उन्होंने जवाब लिखा, 'मैं स्वतंत्र रूप से जीवन-यापन कर रहा हूं और प्रसन्न हूं। यदि परिश्रम, मितव्ययिता, मादक द्रव्यों के परहेज और ईमानदारी से सफलता मिलती है, तो मैं जरूर सफल होऊंगा। आप चिंतित और निराश न हों। मैं जहां भी हूं, ठीक हूं।' फ्रेंकलिन घर नहीं लौटे, वह अपने लक्ष्य को हासिल करने में पूरे मन से जुटे रहे। आखिरकार उन्होंने जो उपलब्धियां अर्जित कीं, उन पर उनके परिवार को ही नहीं, पूरी दुनिया को गर्व करने का अवसर मिला।

संकलन : **दीनदयाल मुरारका**

मुस्लिम महिलाओं को CRPC के तहत गुज़ारा भत्ता का हक, पर्सनल लॉ नहीं आएगा आड़े

सुप्रीम फैसले से याद आया शाह बानो केस

सुधांशु रंजन

मोहम्मद अब्दुल समद बनाम तेलंगाना मामले में सुप्रीम कोर्ट ने एक अहम निर्णय में व्यवस्था दी है कि मुस्लिम महिलाओं को अपराध प्रक्रिया संहिता (CRPC) की धारा 125 के तहत गुजारा भत्ता पाने का अधिकार है। जस्टिस बी वी नागरत्न और जस्टिस ऑगस्टीन जॉर्ज मसीह की बेंच ने स्पष्ट किया कि इसमें किसी मजहब का पर्सनल लॉ आड़े नहीं आएगा।

महिलाएं तय करें | दोनों जजों ने अलग-अलग पर सहमति वाले फैसले दिए कि मुस्लिम महिला (तलाक के बाद अधिकार का संरक्षण) अधिनियम, 1986 उन्हें धारा 125 के तहत मुआवजा मांगने के हक से वंचित नहीं करता। यह महिलाओं को तय करना है कि दोनों में से किस कानून के तहत गुजारा भत्ता चाहिए। कोर्ट ने दोहराया कि CRPC की धारा 125 कमजोर वर्गों की सुरक्षा के लिए सामाजिक न्याय का एक अस्त्र है।

लैंगिक समानता | जस्टिस नागरत्न ने लिखा, 'मुआवजा लैंगिक समानता का एक पक्ष है और समानता लाने का एक जरिया है, कृपा नहीं।' अदालत ने यह भी कहा कि मुस्लिम महिला अधिनियम, 1986 के तहत मिले अधिकार धारा 125 के अंतर्गत दिए गए अधिकारों के अतिरिक्त हैं। पर्सनल लॉ के प्रावधान और धारा 125 के तहत गुजारा भत्ता पाने का अधिकार समानांतर जारी रहेंगे।

तेलंगाना का मामला | यह फैसला तेलंगाना के मोहम्मद अब्दुल समद मामले में आया। उन्होंने 2017 में अपनी बेगम को तीन तलाक दिया था। जीवनयापन का कोई और जरिया नहीं होने के कारण बेगम ने स्थानीय अदालत में CRPC की धारा 125 के तहत याचिका दायर की। समद ने दलील दी कि धारा 125 की तुलना में मुस्लिम महिला अधिनियम तलाकशुदा मुस्लिम महिलाओं को बेहतर राहत देता है, और यह भी कि 1986 का कानून बन जाने के बाद CRPC की धारा 125 मुस्लिम महिलाओं पर लागू नहीं होती।

ऐतिहासिक फैसला

- मुआवजा समानता लाने का एक जरिया
- अधिकार के आड़े नहीं कोई पर्सनल लॉ
- अब्दुल समद मामले में निर्णय

निचली अदालत का निर्णय | इन दलीलों को खारिज करते हुए अदालत ने समद को 20 हजार रुपये प्रति माह गुजारा भत्ते के तौर पर अपनी पूर्व पत्नी को देने का निर्देश दिया। समद ने इस फैसले के खिलाफ हाई कोर्ट में अपील की, जिसने निचली अदालत के निर्णय को सही करार दिया। समद ने इसे सुप्रीम कोर्ट में चुनौती दी।

शाह बानो की याद | इस फैसले ने शाह बानो के प्रेत को जिंदा कर दिया है, जिसने देश की राजनीति में 1980 के दशक के उत्तरार्द्ध में भूचाल ला दिया था। 1932 में शाह बानो का निकाह मोहम्मद अहमद खान से हुआ था। वह इंदौर के कामयाब वकील थे। 14 साल बाद खान ने दूसरा निकाह कर लिया। शाह बानो उपेक्षित रहने लगीं, लेकिन मौखिक इकरारनामे के तहत उन्हें 200 रुपये मासिक दिए जाते थे। 1978 में खान ने यह राशि देनी भी बंद कर दी।

संविधान पीठ के सामने केस | फिर शाह बानो ने स्थानीय अदालत में CRPC की धारा 125 के तहत याचिका दायर कर गुजारे भत्ते की मांग की। तब खान ने उन्हें तलाक दे दिया और अदालत में दलील दी कि चूंकि अब वह उनकी बेगम नहीं हैं, इसलिए सिर्फ इस्लामी शरीयत कानून के तहत उनकी जिम्मेदारी है, धारा 125 के तहत नहीं। अदालत ने खान को 25 रुपये मासिक शाह बानो को देने का आदेश दिया। मुआवजे की रकम इतनी कम होने के खिलाफ शाह बानो ने मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय में रिवीजन पेटिशन दायर किया, जिसने भत्ते की राशि को बढ़ाकर 179.20 रुपये कर दिया। इस फैसले के विरुद्ध मोहम्मद अहमद खान ने शीर्ष अदालत में अपील दायर की। केस पांच जजों की संविधान पीठ के सामने गया।

CRPC सर्वोच्च | 23 अप्रैल 1984 को सर्वोच्च अदालत ने एकमत से निर्णय दिया कि यह प्रावधान मजहब और लिंग के आधार पर भेद नहीं करता है। यह सब पर लागू होता है क्योंकि यह गरीबी की चरम अवस्था के विरुद्ध सुरक्षा है, जहां किसी का जीवनयापन असंभव हो जाता है। कोर्ट ने साफ किया कि यदि पर्सनल लॉ और CRPC में कोई टकराव या विवाद हो तो CRPC ही लागू होगा और शाह बानो को 500 रुपये मासिक देने का निर्देश खान को दिया।

राजीव की गलती | तब केंद्र में राजीव गांधी सरकार थी। कांग्रेस के कुछ मुस्लिम नेताओं ने उन्हें समझा दिया कि अगर संसद ने विधान बनाकर इस निर्णय को नहीं पलटा तो अगले चुनाव में पार्टी का सफाया हो जाएगा। फिर सरकार ने संसद में मुस्लिम महिला (तलाक के बाद अधिकारों की सुरक्षा) विधेयक, 1986 पेश किया गया। विधेयक कानून बन गया, लेकिन इससे राजनीतिक ध्रुवीकरण तेज हो गया। BJP ने इसे तुष्टीकरण करार दिया।

1986 के कानून को चुनौती | मुस्लिम महिला अधिनियम को डानियल लतीफी ने, जिन्होंने शाह बानो की पैरवी की थी, शीर्ष अदालत में चुनौती दी। इस पर 2001 में न्यायालय ने निर्णय दिया, जिसमें अधिनियम की संवैधानिकता को तो सही ठहराया, लेकिन उसने अधिनियम की धारा 3 की बड़ी रचनात्मक व्याख्या की।

कोई शंका नहीं | वैसे, इसके पहले भी CRPC की धारा 125 के तहत मुस्लिम महिलाओं को गुजारा भत्ता दिया जा रहा था, लेकिन फिर भी बार-बार सवाल उठाया जाता था कि मुस्लिम महिला अधिनियम बनने के बाद ऐसा करना गलत है। अब शीर्ष अदालत ने संशय खत्म कर दिया है।

जो हो रहा है उसे स्वीकार करिए, मज़े में रहेंगे

AI Image

जीवन आनंद

'मैं एक तेज रफ्तार ट्रेन में सफर कर रहा था। मेरे सपने थे, योजनाएं थीं, आकांक्षाएं थीं, लक्ष्य थे। मैं पूरी तरह से मग्न था उनमें। और अचानक, किसी ने मेरा कंधा थपथपाया। मैंने मुड़कर देखा तो वह टीसी था, 'आपका डेस्टिनेशन आने वाला है, कृपया नीचे उतर जाएं।' मैं भ्रमित था, 'नहीं, नहीं। मेरी मंजिल अभी नहीं आई!' इसमें मुझे अहसास दिलाया कि आप महासागर में बहते हुए कॉर्क की तरह हैं, जिसकी धाराएं अप्रत्याशित हैं और आप उसे नियंत्रित करने की पूरी कोशिश कर रहे हैं।' दुर्लभ बीमारी से जूझ रहे अभिनेता इरफान खान का यह वो लेटर था, जिसमें उन्होंने जीवन के सच को स्वीकार किया। इस दौर के जाने-माने अध्यात्मिक शिक्षक और लेखक एकहार्ट टोले का मानना है कि अस्वीकार्य को स्वीकार करना (Acceptance of the unacceptable) इस दुनिया में कृपा का सबसे बड़ा स्रोत है। उनके कहने का मतलब है कि जब हम उन चीजों को स्वीकार करते हैं, जो हमारे लिए कठिन या अस्वीकार्य हैं, तब हम सच्चे अनुग्रह और शांति का अनुभव करते हैं। एक खतरनाक बीमारी से ऐसी जंग लड़ते हुए, जिसके अंजाम के बारे में लगभग पहले ही पता था, इरफान ने यही तो किया, स्वीकार। किसी को स्वीकारना आत्मसमर्पण करना नहीं है, बल्कि अपनाना है और यह भी एक तरीका है आनंद को महसूस करने का।

जरूरी नहीं कि अस्वीकार्य को स्वीकार करने की जरूरत उसी समय आन पड़े, जब जीवन कोई गंभीर मोड़ ले रहा हो। यह परिस्थिति हमारे जीवन में हर दिन आती है, हर छोटे-छोटे काम में, हमारे छोटे-छोटे फैसलों में। मुंबई में आखिरी लोकल का मिस होना, दिल्ली के ट्रैफिक में फंसना, बेंगलुरु की किसी सोसायटी में रहते हुए पानी के लिए तरसना या नोएडा के किसी ऑफिस में वैठकर देर तक काम करना जबकि आपके सहयोगी घरों के लिए निकल चुके हों - हर दिन ऐसी ही कुछ बातों से जूझना पड़ता है हम सभी को। और इससे कोफ्त होती है, मन खुद से ही पूछता है कि कहां फंस गया इस चक्कर में। लेकिन, अगर यह मान लिया जाए कि इन पर हमारा बस नहीं है, इन्हें कोसने से कुछ बदलने वाला नहीं, सिवाय इसके कि हम अपना ही मूड खराब करेंगे, तो मन हल्का हो सकता है। तब यह भी संभव है कि हम हालात को बेहतर बनाने का कोई रास्ता ढूंढ लें। वरना होता यही है कि हकीकत को नकारने की लड़ाई में हमारी इतनी ऊर्जा खराब हो जाती है कि समाधान होते हुए भी उसकी ओर ध्यान नहीं जाता। हम बेकार की उलझन में घिरे होते हैं, राई का पहाड़ बना रहे होते हैं।

सभी के जीवन में कुछ ऐसा होता है, जिसे हम बदलना चाहते हैं। लेकिन, सच यही है कि ऐसा संभव नहीं। हर बात हमारे नियंत्रण में नहीं रह सकती। जब हम बदलाव की कोशिश में असफल होते हैं, तो निराशा और दुख का अनुभव होता है। अगर हम उन्हें जैसे हैं वैसे ही स्वीकार कर लें, तो जीवन में शांति और संतोष मिलता है। अस्वीकार्य को स्वीकार करने का मतलब हार मानना नहीं है। यह कोई कमजोरी जाहिर नहीं करता और न ही इससे कोई नुकसान होने वाला है। इसका मतलब है कि हम वर्तमान स्थिति को उसी रूप में अपना रहे हैं, जैसी वह है। यह अपनाना हमें बनाता है विनम्र और सहनशील। जब हम स्वीकारना सीख जाते हैं, तो अहंकार अपने आप छूट जाता है।

एक कला है अस्वीकार्य को स्वीकार करना, जिसकी मदद कहीं भी ली जा सकती है। अगर अब भी आपको लग रहा है कि ऐसा कुछ संभव नहीं, तो एक बार इन बातों को स्वीकार करके देख लीजिए, बस एक बार।

शेयर करें अपने अनुभव

जीवन की दिनचर्या के अनुभवों में आनंद कैसे आनंद महसूस करते हैं, हमें बताएं **nbtreader@timesgroup.com** पर, और सब्जेक्ट में लिखें-'**जीवन आनंद**'

THE SPEAKING TREE

और पढ़ने के लिए देखें

hindi.speakingtree.in

जीवन में दुख का टेंडर भरा है, तो सुख कैसे मिलेगा

निर्मल जैन

वृक्ष किसी को अपनी छांव देने से मना नहीं करते, सूरज भी अपना प्रकाश फैलाने में कोई भेद-भाव नहीं करता, और न ही बादल के बरसने की उदारता में स्थान से कोई फर्क पड़ता है। ऋतु आने पर डाल कोई भी हो कोयल का स्वर वही रहता है। फिर बुद्धि-विवेक संपन्न हमारा मन ही ऐसा क्यों है जो अनुकूलता में प्रसन्नता की बंसी बजाता है, पर गम के पलों में खुशी की सरगम बजाना भूल जाता है। दुख को बदलने या मिटाने की कोशिश करना एक असफल प्रयास है। लेकिन हर गम में भी सरगम के स्वर खोज लेना एक सुखद समाधान है।

संसार का एक भी दुख ऐसा नहीं है जिसमें सुख न छुपा हो। वास्तव में यह सुख या दुख, मानसिक ही है। दुख-सुख हमारे भावों में बसते हैं। कोई करोड़ों की संपत्ति होने पर भी हाय-हाय करता रहता है और कोई अपने सीमित साधनों में भी संतुष्ट और सुखी रहता है। जो जहां है जैसा है, अगर वहां सुखी नहीं है तो वह फिर कहीं भी सुखी नहीं हो सकता। इसलिए दुख का लौह-चुंबक बनकर नहीं जीना, खुश रहने की आदत डालनी है। सब दिन यदि एक समान हों, तो जीवन में निराशा का साम्राज्य छा जाए। सुख और दुख दोनों मिलकर ही जीवन को समरस बनाते हैं।

खुशी और गम एक-दूसरे के समानांतर चलते हैं। जब एक शांत होता है तो दूसरा भी शिथिल पड़ जाता है। अपने दुख की चारदीवारी में घुट-घुटकर गलने की बजाय औरों की खुशी में अपनी खुशी खोजने का जादू सीखना है। उदास और उखड़ा-उखड़ा व्यक्तित्व आसपास में उदासी का कोहरा भर देता है और खुशी का सूरज चाहते हुए भी मुस्कान की किरणें नहीं बिखेर सकता। हमारे मन की एक और विचित्रता है कि हम दुख के लिए जितना चिंतित और उत्सुक रहते हैं, उतना सुख के लिए उत्साहित नहीं। एक बार का अपमान मन को जिंदगी भर याद रहता है, पर सौ बार जो सम्मान मिला उसे भुला देता है। मन का 'मैग्नेट' हमेशा दुख को आकर्षित करता है। क्या इसलिए कि हमें दुख में रस मिलता है? कभी अपने आप से एक प्रश्न करके देखें कि रोशनी की मौजूदगी में जिस उत्साह से चले थे, क्या उतने ही उल्लास से अंधेरी डगर पर भी चल पाएंगे?

हम सभी पर धर्म सत्ता और कर्म सत्ता का शासन चलता है। इसलिए जीवन में सुख और दुख दोनों मिलते ही रहते हैं। हमने जिस चीज का टेंडर भरा है, वही तो हमारे लिए खुलेगा और मिलेगा। जिस सुख की तलाश में हम अथक रूप से भागे-फिरते हैं, उसे पा जाने के बाद भी शांति और सुख कहां? एक नई चिंता शुरू हो जाती है कि वह सुख बना रहे, बचा रहे। फिर उसे बचाने और बनाए रखने में जो दुख उपजता है, वह बढ़ता ही जाता है। महत्वपूर्ण यह भी है कि दुख भी बड़े काम की चीज है। कई बार तो दुखों के ये झंझावात ही महानता और जीवन में विशेष उपलब्धियों का कारण बनते हैं। दुख हमें धर्म की, प्रभु की याद दिलाता है। धर्म की शरण में जाते ही सद्बुद्धि का दरवाजा खुलता है और आनंद की स्वर लहरी गुंजायमान होने लगती है।

डिजिटल अवशेषों का क्या किया जाए

मृत्युंजय राय

विचार विंडो

'**Data** is new oil,' अगर किसी को कभी इस बात पर शक रहा भी होगा तो जेनरेटिव आर्टिफिशल इंटेलिजेंस (AI) के आने से वह दूर हो गया होगा। यह AI लार्ज लैंग्वेज मॉडल (LLM) पर आधारित है, जिसे ट्रेनिंग देने में बेशुमार डेटा लगा है। और इसी जेनरेटिव AI के बारे में कहा जा रहा है कि यह हमारी दुनिया बदलने जा रहा है। लेकिन डेटा को लेकर निजी तौर पर इससे भी एक बड़ा सवाल पहले पूछा जाता रहा है, जो बेहद मौजूं है। सवाल यह कि जब कोई शख्स दुनिया छोड़कर चला जाता है तो उसके पीछे जो उसका डेटा रह जाता है, उसका क्या होता है और क्यों किसी भी शख्स के लिए यह महत्वपूर्ण सवाल होना चाहिए।

अगर आपका कोई प्रिय अब इस दुनिया में नहीं रहा और सोशल मीडिया पर पोस्ट न कर रहा हो, लेकिन वहां से नोटिफिकेशंस आते रहते हैं। मान लीजिए, अगर कोई शख्स आपका साथ छोड़कर चला गया हो और उसके जन्मदिन का नोटिफिकेशन आए तो आपको कैसा महसूस होगा? अगर उस शख्स की असमय मृत्यु हुई हो तो उसके जन्मदिन का रिमाइंडर आपको दुखी कर सकता है। कुछ वैसे ही, जैसे किसी जख्म को कुरेद दिया गया हो। **The Afterlife of Data: What Happens to Your Information When You Die and Why You Should Care** में Carl Ohman ने डेटा से जुड़े ऐसे ही कई अहम सवाल उठाए हैं। 2022 में एमजॉन ने कहा था कि वह अपने वर्चुअल असिस्टेंट एलेक्सा को ऐसे फीचर से लैस करने जा रही है, जिससे आप उसे अपने किसी मृत रिश्तेदार की आवाज दे सकते हैं।

खैर, इस किताब के केंद्र में कई अहम सवाल हैं? मसलन, जिस शख्स की मौत हो चुकी हो, उसके डेटा पर किसका अधिकार है? अगर डेटा किसी शख्स का डिजिटल प्रतिबिंब है तो मरने के बाद उसके प्रति हमारी क्या जवाबदेही बनती है? Carl रीडर्स को याद दिलाते हैं कि कोई भी व्यक्ति जब इस दुनिया में नहीं रहता तो समाज उसके शरीर या लाश को यूं ही नहीं छोड़ देता। उस व्यक्ति का अंतिम संस्कार किया जाता है। क्या डेटा को लेकर इसी तरह की संवेदनशीलता की जरूरत है? और ये सवाल आपके लिए निजी तौर पर जितने जरूरी हैं, उतने ही जरूरी ये समाज के स्तर पर भी हैं।

Carl लिखते हैं कि डिजिटल माध्यमों पर हम जो डेटा क्रिएट कर रहे हैं, वह असल में इंसानी व्यवहार का इतिहास है और आगे भी होगा। मसलन, इंसानी सभ्यता को समझने के लिए अभी तक आर्कियोलॉजिकल खोजों का सहारा लिया जाता रहा है। जमीन के अंदर छुपे राज जब बाहर आते हैं तो उससे हैरतअंगेज जानकारियां मिलती हैं। लेकिन मान लें कि किसी को आज से कुछ दशकों बाद यह जानना हो कि कोरोना महामारी के दौर में इंसानों पर क्या गुजरी और उनका बर्ताव कैसा रहा तो डिजिटल आर्काइव से इस सिलसिले में काफी मदद मिल सकती है।

ऐसे ही तमाम बड़ी ऐतिहासिक घटनाओं के बारे में आने वाली पीढ़ियां इंसानों के मौजूदा व्यवहार को देखकर काफी कुछ पता लगा सकती हैं। इसलिए यह आने वाली पीढ़ियों के लिए इंसानों का अहम दस्तावेज हो सकता है। Carl हमें याद दिलाते हैं कि डेटा की यह समस्या कोई इंडिविजुअल लेवल पर नहीं है। यह एक साझी समस्या है। इसलिए इसका जवाब भी साझे स्तर पर ही तलाशा जाना चाहिए।

करियर या हर्डल रेस

प्रणव प्रियदर्शी

वर्किंग विमिन की कुछ समस्याएं ऐसी होती हैं, जिन्हें आम माना जा सकता है। तकरीबन सभी कामकाजी महिलाओं को उन चुनौतियों से रू-ब-रू होना पड़ता है। मगर कुछ समस्याएं उनकी ऐसी भी होती हैं, जो सबके खाते में नहीं आतीं। अमेरिका की डिजिटल एक्सपीरियंस कंसल्टेंसी फर्म वाउटिएस की टेक्नॉलजी एनालिस्ट कायत्री करुप्पासामी की खासियत यह है कि वह इन दोनों ही तरह की चुनौतियों से जूझकर करियर की ऊंचाई पर पहुंची हैं। उनके करियर को पहला झटका 2014 में लगा, जब पति के साथ UK शिफ्ट होने के लिए उन्हें HCL Tech में सॉफ्टवेयर इंजीनियर की जॉब छोड़नी पड़ी। वहां दो साल की तलाश के बाद काम मिला, मगर एक साल बाद ही उन्होंने एक बच्ची को जन्म दिया और काम छोड़ना पड़ गया। यह दूसरा झटका था करियर को। लेकिन बात यहीं नहीं रुकी। दो साल बाद अचानक उनके पति की मौत हो गई। इस त्रासदी ने जैसे सब कुछ उलटपलट दिया। वह बेटी को लेकर अपने देश लौट आईं। अब नए सिरे से काम की तलाश शुरू हुई। शुरू में सोचा कि लाइसेंस टेस्टिंग वाला काम ही देखा जाए, जो वह UK में कर रही थीं। लेकिन उसमें काम के घंटों का मसला था। बेटी की देखभाल करनी थी, लिहाजा देर तक काम नहीं कर सकती थीं। दूसरा विकल्प था मेनफ्रेम डिवेलपर का, जो वह UK शिफ्ट होने से पहले कर रही थीं। मगर यहां मार्केट में उस वक्त ओपनिंग नहीं थी। इन बाधाओं के बीच भी अनुभव और हुनर के आधार पर उन्होंने पांच अलग-अलग कंपनियों में अर्जी दी। हर जगह टेक्निकल इंटरव्यू राउंड क्लीयर हो गया, लेकिन करियर में गैप के चलते पांचों जगह रिजेक्ट हो गईं। उसी दौरान उनका ध्यान वाउटिएस के रिटर्न टू वर्क प्रोग्रैम की ओर गया। यहां बात बन गई। कंपनी ने उनके स्किल और सात साल के एक्सपीरिएंस को तवज्जो दी, गैप को इग्नू नहीं बनाया। आज कायत्री की काबिलियत न सिर्फ उनके, बल्कि कंपनी और इंडस्ट्री के भी काम आ रही है।

कायत्री करुप्पासामी

आधी दुनिया

रीडर्स मेल

www.edit.nbt.in

■ सीढ़ियां जोड़ती भी हैं

यह पत्र 'जीवन आनंद' कॉलम में 15 जुलाई को प्रकाशित लेख 'सीढ़ियों पर छिपा खुशियों का मेसेज देखा क्या' से संबंधित है। लेखक ने बिलकुल सही कहा है कि सीढ़ियों पर चढ़ना केवल एक शारीरिक गतिविधि नहीं, बल्कि यह जीवन की चुनौतियों का प्रतीक भी है। इंटरव्यू देने के लिए पहली बार जिन सीढ़ियों का इस्तेमाल किया था, तब तो शरीर को पता ही नहीं चला था कि वह थक रहा है या नहीं। खुद को सामान्य दिखाने की कोशिश ने मुझे और फुर्तीला बना दिया था। लेख में बिलकुल सही कहा गया है कि सीढ़ियां अतीत, वर्तमान और भविष्य को जोड़ती हैं।

प्रदीप सक्सेना, ईमेल से

■ जीने का तरीका

15 जुलाई का लेख 'सीढ़ियों पर छिपा खुशियों का मेसेज देखा क्या' पढ़ा। सीढ़ियां हमारे जीवन की यात्रा का प्रतीक हैं। सीढ़ियां आत्मनिरीक्षण और आत्म-विकास का माध्यम भी हो सकती हैं। जब हम सीढ़ियां चढ़ते हैं, तो अपने भीतर की शक्ति और क्षमता को महसूस करते हैं। यह हमें आत्मविश्वास और आत्मनिर्भरता का अहसास कराती हैं। किसी ने मंजिल तक पहुंचने में कितनी सफलता पाई, सीढ़ियों से सहज ही पता चल जाता है। जीवन भी सीढ़ीनुमा हो, तो जीने का तरीका मिल जाए।

देवेंद्र चौधरी, नोएडा

■ जीत की अहमियत

जीत की खुशी एक अनोखा और अप्रतिम अनुभव है। यह वो क्षण होता है जब हमारी मेहनत, समर्पण और दृढ़ संकल्प का फल मिलता है। जीत का अनुभव हमें गर्व और संतोष से भर देता है। यह केवल एक लक्ष्य की प्राप्ति नहीं होती, बल्कि उन सभी प्रयासों और संघर्षों की मान्यता है, जो हमने उस लक्ष्य को पाने के लिए किए थे। जीत का अनुभव हमें यह सिखाता है कि मुश्किलें हमारी सफलता की राह में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं।

सुनीता रावत, ईमेल से

जीवन आनंद

nbtedit@timesgroup.com पर अपनी राय नाम-पते के साथ मेल करें।

अंतिम पत्र

प्रदूषण दूर करना था, धूल हटाने में खर्च कर दिया 64% फंड - खबर - अधिकारियों को लगा होगा, धूल ही नहीं रहेगी तो हवा क्या बिगाड़ लेगी!

प्रमोद कुशवाहा

नभ टाइम्स, बी. 6, 246-250 इंडस्ट्रियल एरिया, विनोबा पुरी/ब्लॉक बी इंडस्ट्रीज़ ऐरिया, पुरानी सब्जी मंडी, लोधी रोड, दक्षिण पश्चिम दिल्ली, दिल्ली-110003 से प्रकाशित तथा **राइजिंग इंडिया प्रिंट, पाइप हाउस, औद्योगिक क्षेत्र मालिकपुर** और नरेला रोड 7-8, सेक्टर 36-ए, इंडस्ट्री एरिया, रोहिणी सेक्टर तालाबीरा, नरेला, दिल्ली से मुद्रित। फोन : 23330000 फैक्स: 22440347, पंजीकृत कार्यालय : टाइम्स बिल्डिंग डेस्क, पुणे-400001। पिनकोड देश मुख्य : 1 रु. डी.सी. सहित। पेज 8 मूल्य पत्रिका सहित 5 रुपये। संपादक : नेपाली 5 रु., दीपावली - नेपाली 5 रु.

संपादक (टिप्पणी कॉलम) : आलोक पुराणिक (उक्त अंक में प्रकाशित समाज सरकारों के पत्रों एवं लेखों से हो भी सकती, एवं के उत्तरदायी नहीं)।

आतंकवाद से मुकाबला

मोदी का फैसला

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने आतंकवाद से मुकाबले के लिए जम्मू कश्मीर में 'पूर्ण तैनाती' के आदेश दिए हैं। यह नागरिकों की सुरक्षा के दृष्टिकोण से स्वागत योग्य निर्णय है। आतंकवाद पर बढ़ती चिन्ता को संबोधित करने तथा सुरक्षा मजबूत करने की दिशा में निर्णायक कदम के रूप में प्रधानमंत्री मोदी ने जम्मू क्षेत्र में सुरक्षा बलों की समग्र तैनाती का निर्णय किया है। यह रणनीतिक निर्णय भारत के एक सर्वाधिक संवेदनशील क्षेत्र में शांति और स्थायित्व सुनिश्चित करने के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता प्रकट करता है। आतंकवाद के खिलाफ राष्ट्र के वर्तमान समय में जारी संघर्ष में जम्मू का महत्वपूर्ण स्थान है। हालिया वर्षों में इस क्षेत्र में अनेक हिंसक घटनायें हुई हैं जिनके चलते सतर्कता तथा सुरक्षा बलों की प्रतिक्रिया बढ़ाने की जरूरत पड़ी है। प्रधानमंत्री का हालिया निर्देश क्षेत्र में बढ़ती आतंकी गतिविधियों तथा यहां स्थिरता समाप्त करने के प्रयासों के संदर्भ में आया है। हाल ही में चार सैनिक डोडा में शहीद हुए जिससे ऐसी घटनाओं पर फौरन लगाम लगाने की आवश्यकता सामने आई। 'पूर्ण तैनाती' के अंतर्गत जम्मू क्षेत्र को आबंटित संसाधनों तथा वहां सैनिकों की संख्या में वृद्धि होगी। इस कार्रवाई में न केवल अतिरिक्त सैनिकों की तैनाती होगी, बल्कि विभिन्न सुरक्षा एजेंसियों के बीच समन्वय बढ़ाया जाएगा जिनमें खुफिया एजेंसियां, अर्धसैनिक बल तथा स्थानीय कानून-व्यवस्था एजेंसियां शामिल हैं।

तैनाती की रणनीति में कुछ प्रमुख क्षेत्रों पर ध्यान केन्द्रित किया जाएगा। पहला, निगरानी बढ़ाने तथा खुफिया सूचनायें एकत्र करने पर जोर दिया जाएगा ताकि आतंकी गतिविधियों का पहले से अनुमान लगा कर उनको

होने से रोका जा सके। दूसरा, सुरक्षा बलों को जोखिम वाले क्षेत्रों में गश्त बढ़ानी होगी ताकि अन्य संभावित खतरों को रोका जा सके तथा स्थानीय जनता को सुरक्षा का आश्वासन मिले। इसके साथ ही स्थानीय समुदायों से सहयोग प्राप्त करने का प्रयास किया जाएगा ताकि महत्वपूर्ण सूचनायें मिलें तथा उनमें विश्वास पैदा हो। यह प्रभावी आतंकवाद-विरोधी कार्रवाइयों के लिए जरूरी है। कोई आश्चर्य नहीं कि प्रधानमंत्री मोदी के निर्णय को विभिन्न क्षेत्रों से समर्थन मिला है जिनमें राजनेता, सुरक्षा विशेषज्ञ तथा आम जनता शामिल है। सरकार ने जोर दिया है कि यह कदम एक व्यापक रणनीति का हिस्सा है जिसका उद्देश्य आतंकवाद द्वारा पैदा चुनौतियों को संबोधित करना तथा जम्मू में नागरिकों की सुरक्षा सुनिश्चित करना है। एक बयान में प्रधानमंत्री मोदी ने ऐसे खतरों को देखते हुए सतर्कता बढ़ाने तथा दृढ़ रहने की आवश्यकता पर जोर दिया है। उन्होंने जनता को आश्वस्त किया है कि सरकार का प्रमुख लक्ष्य क्षेत्र में लोगों का जीवन बचाना तथा शांति बनाए रखना है। जम्मू में पूर्ण तैनाती आतंकवाद से मुकाबले में भारत के वर्तमान प्रयासों में महत्वपूर्ण कदम है। उम्मीद है कि सुरक्षा बलों की बढ़ी हुई उपस्थिति तथा बेहतर समन्वय से आतंकी गतिविधियों का मुकाबला करने तथा क्षेत्र में सामान्य स्थिति बहाल करने में सहायता मिलेगी। बदलती स्थिति को देखते हुए जीवन सुरक्षा ढांचे के प्रति सरकार की प्रतिबद्धता पर सबकी नजर रहेगी। बड़ी संख्या में सुरक्षा बलों की तैनाती की प्रभावशीलता रेखांकित रणनीतियों के सफल क्रियान्वयन तथा उभरती चुनौतियों के अनुसार स्वयं को ढालने की क्षमता पर निर्भर करेगी। 'पूर्ण तैनाती' का प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी का आदेश आतंकवादियों के लिए स्पष्ट चेतावनी है कि भारत अपने क्षेत्र में किसी प्रकार की अराजकता बर्दाश्त करने के लिए तैयार नहीं है और वह आतंकवादियों का सफाया कर देगा।

बैंकिंग क्षेत्र में सुधारों की उम्मीद

पिछले वर्षों में भारतीय बैंक घोटालों, डूबे कर्जों तथा बढ़ते एनपीए से निपटते रहे हैं। हालिया सरकारी पहलों से कर्जों की वसूली में उल्लेखनीय वृद्धि तथा एनपीए में कमी आई है।

विवेक शुक्ला
(लेखक, वरिष्ठ पत्रकार हैं)

पिछले वर्षों में भारतीय बैंक घोटालों, डूबे कर्जों तथा बढ़ते एनपीए से निपटते रहे हैं। हालिया सरकारी पहलों से कर्जों की वसूली में उल्लेखनीय वृद्धि तथा एनपीए में कमी आई है। केन्द्र में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में पुनः सरकार बनने से बैंकिंग क्षेत्र को ज्यादा पारदर्शी तथा सक्षम बनाने की दिशा में मजबूत कदम उठाने की उम्मीद बढ़ी है। हालिया वर्षों में भारतीय बैंकों को किसी अन्य देश के बैंकों की तुलना में काफी अधिक उतार-चढ़ावों का सामना करना पड़ा है। 2014 में पहली बार मोदी सरकार बनने से पहले भारतीय बैंकों को अनेकानेक घोटालों, कर्ज देने में धोखाधड़ी, घोटालों, बढ़ती गैर-निष्पादित परिसंपत्तियों-एनपीए तथा कर्ज माफी की गलत नीतियों का शिकार होना पड़ा था। इसके कारण कुछ बैंक डूब गए थे या उनमें भारी घाटा हुआ था। हालांकि, मोदी के सत्ता में आने से पहले भी केन्द्र सरकारों ने इन मुद्दों से निपटने के लिए कुछ कदम उठाए थे, पर उनके आधे-अधूरे क्रियान्वयन के कारण इच्छित परिणाम सामने नहीं आए थे। सौभाग्य से प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में सरकार ने तेजी से कदम उठाते हुए बैंकिंग क्षेत्र में व्याप्त अनियमितताओं को संबोधित किया। इन कदमों तथा सरकार द्वारा निर्धारित नीतियों के सटीक व प्रतिबद्ध क्रियान्वयन से धीरे-धीरे भारतीय बैंकों की स्थिति में सुधार आया। मोदी के नेतृत्व में 2019 में पुनः केन्द्र सरकार बनने के बाद बैंकिंग व्यवस्था के सुधार में और तेजी आई। इसके परिणामस्वरूप आज अधिकांश बैंकों की स्थिति पहले की तुलना में बहुत अच्छी हो गई है।

मोदी सरकार की नीतियों के चलते अनेक बैंक न केवल अपने नुकसान की भरपाई कर सके हैं, बल्कि वे मुनाफे की ओर भी बढ़ रहे हैं। इसके साथ ही उन्होंने घोटालों पर लगभग पूर्ण विराम लगा दिया है। धोखाधड़ी करने वाले अनेक लोगों की परिसंपत्तियां जब्त कर कर्जों की वसूली की गई है, बैंकों का पुनः पूंजीकरण किया गया है तथा एनपीए के बोझ में भारी कमी आई है। यह एक अत्यन्त सकारात्मक स्थिति है। 2013 से 2017 के बीच जहां एनपीए 12.47 प्रतिशत था, वहीं यह धीरे-धीरे घट कर सितंबर, 2023 में केवल 3.2 प्रतिशत रह गया। हालांकि, इस कमी में सरकार द्वारा बैंकों के पुनः पूंजीकरण के प्रयासों ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। वर्तमान समय में सवाल यह है कि क्या बैंकों में सुधार की वर्तमान स्थिति आगे बढ़ेगी अथवा 'लौट के बुद्धू घर को आए' वाली कहावत फिर सही सिद्ध होगी। अतीत में भारतीय बैंक इस बात की गवाही बने हैं कि स्वतंत्रता के पहले और उसके बाद भी अनेक बैंक भारी घाटे के कारण डूब रहे थे। इस उथलपुथल वाली स्थिति से हमें यह सोचने पर मजबूर होना पड़ रहा है कि जब तक लंबे समय तक बैंकों में सुधारों की प्रक्रिया जारी नहीं रहती है तब तक समस्या का स्थाई समाधान सामने नहीं आएगा।

वरिष्ठ लेखक श्रीपाल जैन ने अपनी हालिया पुस्तक 'भारतीय बैंकों का बदलता चेहरा' में बैंकिंग क्षेत्र से जुड़ी अनेक उपलब्धियों, समस्याओं और परिघटनाओं का विस्तृत विश्लेषण किया है। इस पुस्तक में घोटालों, बड़े-बड़े घोटालेबाजों, घोटालों के तरीकों, बैंकिंग व्यवस्था में साइबर अपराधों, 'यस बैंक' के उत्थान और पतन, एनपीए का संजाल, आदि का विस्तृत विवरण पेश किया है। उन्होंने आजादी के पहले और बाद में बैंकिंग संस्थानों की स्थिति का वर्णन किया है। इसके साथ ही पुस्तक में बैंक निजीकरण पर मचे शोर, कृषि कर्जों की माफी के अर्थशास्त्र, नोटबंदी, जन-धन योजना, भारतीय रिजर्व बैंक की स्वायत्तता तथा डिजिटल बैंकिंग की बढ़ती लोकप्रियता व इसके जोखिमों, आदि का भी विस्तृत वर्णन किया गया है।

स्वतंत्रता के बाद देश में निजी व सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक थे, पर उनके भीतर अनेक घोटाले होते रहते थे और वे अनेक मामलों में विफल रहते थे। इसके बावजूद सार्वजनिक क्षेत्र के बैंक आर्थिक वृद्धि तथा बिजनेस विस्तार की प्रमुख कुंजी बने हुए थे। निजी बैंक आमतौर से साधारण लोगों के खाते नहीं खोलते थे। जुलाई, 1969 में बैंकों के राष्ट्रीयकरण से आम जनता की बैंकों तक पहुंच बढ़ी। इस कालखंड में अनेक बैंकों का विलय हुआ जिसके कारण कुछ सकारात्मक नतीजे सामने आए। लेकिन धीरे-धीरे भ्रष्टाचार, रिश्वतखोरी तथा सार्वजनिक बैंकों में राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण भारी मात्रा में असली और फर्जी कंपनियों को कर्ज दिए गए। इनमें से अनेक कर्जों की या तो वापसी नहीं हुई या उनकी केवल आंशिक वसूली ही संभव हुई। इसके परिणामस्वरूप सार्वजनिक तथा निजी बैंकों को भारी घाटा हुआ। 1990 के दशकारंभ में 'उदारवादी नीतियां' स्वीकार की गई और इसके थोड़े समय बाद एचडीएफसी, आईसीआईसीआई बैंक, यस बैंक, आदि निजी बैंक अपनी आधुनिक तकनीकों के कारण लोकप्रिय हो गए। इन तकनीकों से पैसा जमा करने, पैसा निकालने, चेकों की तेजी से क्लियरिंग, बीमा, म्यूचुअल फंड, आदि खोलना शामिल था। निजी बैंकों के नए उत्पादों, योजनाओं और आधुनिक तकनीकों ने सार्वजनिक क्षेत्र बैंकों के सामने भारी प्रतियोगिता पैदा की। इसके कारण सार्वजनिक क्षेत्र बैंकों तथा निजी क्षेत्र के अन्य बैंकों को नए उत्पादों, योजनाओं और आधुनिक तकनीकों को लागू करने के लिए मजबूर किया। इसके परिणामस्वरूप सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के बैंकों की स्थितियों में सुधार आया, लेकिन उदारीकरण की लहर ने भी अनेक घोटालों, रिश्वतों, भ्रष्टाचार तथा राजनीतिक हस्तक्षेप को जारी रखा।

इसके कारण सार्वजनिक व निजी क्षेत्र बैंकों को अनेक घोटालों का सामना भी करना पड़ा। हर्षद मेहता व केतन पारिख जैसे घोटालेबाजों द्वारा किए गए विशाल घोटालों तथा 'ग्लोबल ट्रस्ट' जैसे बैंकों के डूबने की परिघटनायें भी इस कालखंड में सामने आईं। प्रधानमंत्री मोदी के नेतृत्व में बनी सरकार के पहले कार्यकाल में पीएनबी बैंक, पीएमसी बैंक व अन्य सहकारी बैंकों तथा यस बैंक आदि में हुए घोटालों तथा बड़े घोटालेबाजों के विदेश भाग जाने से काफी बड़ा संकट पैदा हुआ। इस कारण बैंकों पर एनपीए का बोझ रिकार्ड स्तर पर पहुंच गया। इस संदर्भ में छोटे बैंकों के बड़े सार्वजनिक बैंकों में विलय का प्रशंसनीय कदम उठाया गया जिससे बड़े सार्वजनिक क्षेत्र बैंकों की संख्या घटी। इस बीच भारत का व्यापार तेजी से बढ़ रहा था जिससे बैंकों में पूंजी तरलता लगातार पैदा हो रही थी। मोदी सरकार ने भारतीय रिजर्व बैंक की निगरानी को ज्यादा प्रभावी बनाया, नोटबंदी की, जनधन योजना व आवास योजनायें शुरू कीं तथा आत्मनिर्भर भारत, विनिर्माण व अन्य क्षेत्रों को तेजी से आगे बढ़ाया।

इस बीच कोविड-19 वैश्विक महामारी का हमला हुआ जिसने अर्थव्यवस्था को तगड़ा धक्का दिया। लेकिन कुछ ही महीनों में मोदी सरकार ने आर्थिक मोर्चे पर नियंत्रण के लिए मजबूत कदम उठाए। महामारी के दौरान बैंकिंग में डिजिटल लेनदेन तेजी से बढ़े और उन्होंने सारी दुनिया के रिकार्ड तोड़ दिए। मोदी सरकार के प्रयासों से वैश्विक महामारी तथा इस दौरान लाकडाउन के कालखंड में देश के सबसे गरीब लोगों की आजीविका तथा मूलभूत आवश्यकताएं मोटेतौर से पूरी की जा सकीं। इसमें जनधन योजना, आधार कार्ड तथा यूपीआई ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

वर्तमान समय में यूपीआई न केवल भारत, बल्कि विदेशों में भी अपनी छाप छोड़ रही है। लेकिन इन सबके बावजूद बैंकों के स्वास्थ्य के प्रति निश्चिन्त नहीं हुआ जा सकता है। आज भी कभी-कभी बैंक घोटाले सामने आते हैं, डिजिटल बैंकिंग घोटाले बढ़ रहे हैं तथा बैंकिंग क्षेत्र में साइबर अपराधियों का दायरा लगातार बढ़ता जा रहा है। इसके कारण न केवल बैंकों, बल्कि खाताधारकों को भी भारी नुकसान हो रहा है। इस मुद्दे पर अभी फूलप्रूफ लगाम नहीं लगी है। श्रीपाल जैन ने अपनी उपरोक्त पुस्तक के समापन में कहा है, 'वर्तमान समय में अनेक बैंक मुनाफे की ओर बढ़ रहे हैं। मोदी सरकार ने समस्याओं और चुनौतियों को अवसरों में बदला है जिसमें भारतीय रिजर्व बैंक की निगरानी का महत्वपूर्ण योगदान है।' लेकिन जब तक फर्जी दस्तावेजों के आधार पर भ्रष्टाचार जारी है तथा बैंकिंग में साइबर अपराधियों की घुसपैठ नहीं रोकी जाती है, तब तक बैंकों को मजबूत करने तथा फूलप्रूफ सुरक्षा देने का वादा पूरा नहीं होगा।

ट्रंप पर हमले के भावी परिणाम

डोनाल्ड ट्रंप पर हुए हमले का अमेरिकी राष्ट्रपति चुनाव और अमेरिकी राजनीति पर दूरगामी प्रभाव पड़ सकता है।

कुमारदीप बनर्जी
(लेखक, नीति विश्लेषक हैं)

वैश्विक मामलों की अस्थिर विसात पर एक सप्ताह का समय काफी लंबा होता है, हालांकि, संयुक्त राज्य अमेरिका के पूर्व राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप की हाल ही में हुई हत्या की कोशिश भविष्य की कार्रवाई पर गहरा प्रभाव डालेगी। जबकि हाल के दिनों में कई यूरोपीय नेताओं और मध्य पूर्व के कुछ लोगों पर हिंसक जानलेवा हमले किए गए हैं, पूर्व राष्ट्रपति ट्रंप के कानों के पास से गोली निकल जाने से विश्व नेताओं के लिए कई सवाल खड़े हो गए हैं।

यह अनुमान लगाना जल्दबाजी होगी कि हत्या की कोशिश डोनाल्ड ट्रंप के लिए एक शानदार जीत में तब्दील होगी या नहीं, जो नवंबर के चुनावों में मौजूदा राष्ट्रपति जो बिडेन के साथ फिर से मुकाबला करने का सामना कर रहे हैं। अमेरिका में डेमोक्रेट्स एक विभाजित समूह हैं, जिसमें कई नेता आंतरिक रूप से राष्ट्रपति जो बिडेन की ओवल ऑफिस में दूसरी बार आने की कोशिश पर सवाल उठा रहे हैं, क्योंकि उनकी उम्र से संबंधित कई सार्वजनिक गलतियां हैं।

अमेरिका और दुनिया भर के कई अन्य थिंक टैंक क्षेत्रों में अधिकांश सार्वजनिक बहसें राष्ट्रपति बिडेन की मानसिक सतर्कता पर बहस कर रही हैं और अगर वे दूसरी बार चुने जाते हैं तो वे अपना पूरा चार साल का कार्यकाल पूरा कर पाएंगे। किसी गंभीर बीमारी के कारण बीच में कोई भी बदलाव, जिसकी आशंका जताई जा रही है, अमेरिकी राष्ट्रपति के दूसरे कार्यकाल के लिए बोली को कमजोर कर देगा।

भारत सहित हर महत्वपूर्ण लोकतंत्र की तरह, अमेरिका में मतदाता एक विभाजित समूह है, जिसमें ट्रम्प और जो बिडेन के समर्थकों के बीच एक गहरी खाई है। ट्रम्प और उनके समर्थकों पर

डेमोक्रेट का हमला उसी तरह का है, जैसा कि भारत में विपक्षी दलों ने हाल ही में संपन्न संसदीय चुनावों के दौरान किया था। अपने मतदाताओं को मुख्य संदेश देश को तानाशाही ताकतों (ट्रम्प/पीएम मोदी) से बचाना है, जो अपने बड़े-से-बड़े पंथ के नेताओं के तहत संविधान को उलट देंगे। इससे मतदाताओं में दरार पैदा हो गई, जो पहले से ही बिखर चुके समाज में लगातार सूचनाओं के सागर से भरे हुए थे, जो मुख्य रूप से सोशल मीडिया पर एक ही घटना के परस्पर विरोधी संस्करण भेज रहे थे। राजनीति और बयानबाजी को अलग रखें, तो ट्रम्प के युद्ध के मैदान (चुनाव अभियान) में वापस आने के बाद, एक दिलचस्प ब्रिज्म होगा, जिसमें वे पेंसिल्वेनिया में मंच से एक प्रतिष्ठित मुट्ठी के साथ और पृष्ठभूमि में अमेरिकी ध्वज लहराते हुए उतरेंगे।

यह तस्वीर आने वाले लंबे समय के लिए अमेरिकी लोकतंत्र की लचीलापन को परिभाषित करने की संभावना है। अपने कुछ साक्षात्कारों में, श्री ट्रम्प, जीवन को बदलने वाली घटना से विनम्र प्रतीत होते हैं, जहाँ वे लगभग ओवल ऑफिस के बजाय ताबूत में समाप्त हो गए थे। यह देखना सार्थक होगा कि क्या पूर्व राष्ट्रपति अपने कुछ प्रमुख घोषणापत्र जैसे कि आव्रजन और चुनने की स्वतंत्रता (आत्मरक्षा के लिए आग्नेयास्त्र रखने के अधिकार सहित) पर संयम बरतते हैं। वैश्विक परिप्रेक्ष्य से आप्रवासन एक ऐसा विषय है जिस पर बारीकी से नज़र रखी जाएगी, जिसमें भारत भी शामिल है, जहाँ सबसे ज़्यादा आप्रवासी वैध या अवैध मार्गों से अमेरिकी तटों पर पहुंचते हैं। डोनाल्ड ट्रंप के उपराष्ट्रपति पद के उम्मीदवार जे डी वेंस का जीवनसाथी पीआईओ है।

उनकी पत्नी के माता-पिता आंध्र प्रदेश से आए अप्रवासी हैं और एक तरह से, यह चुनाव अमेरिकी समाज की बहुलतावादी प्रकृति को परिभाषित करता है। यह मान लेना एक दूर की कौड़ी होगी कि अगर ट्रंप को दूसरा कार्यकाल मिलता है, तो उनके उपराष्ट्रपति बनने के कारण आप्रवासन पर उनके विचार और नीतियाँ नरम पड़ जाएँगी। इसी तरह, ट्रंप की वापसी का द्विपक्षीय व्यापार संबंधों पर दूरगामी प्रभाव पड़ सकता है, खासकर भारत के साथ। कोई यह तर्क दे सकता है कि भारत को वाशिंगटन डीसी में कई रक्षा और प्रौद्योगिकी साझेदारियों पर द्विदलीय समर्थन प्राप्त है, जिसे पीएम मोदी ने एक दशक से ज़्यादा समय तक सावधानीपूर्वक पोषित किया है।

पीएम मोदी शायद एकमात्र ऐसे पीएम हैं, जिन्होंने पिछले एक दशक में तीन अमेरिकी राष्ट्रपतियों के साथ काम किया है और नवंबर में उनके किसी पूर्व मित्र ट्रंप या बिडेन के वापस आने की संभावना है। यह अनिश्चित समय हो सकता है, तथापि, अतीत के रिश्ते और हिंद-प्रशांत क्षेत्र के भविष्य को सुरक्षित करने का वादा, नई व्यवस्था के तहत भारत और अमेरिका के बीच संबंधों को मजबूत बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण साबित होगा।

आप की बात

उचित आदेश

उत्तर प्रदेश और हरिद्वार में जारी आदेश के मुताबिक कांवड़ यात्रा के पूरे रूट पर दुकान लगाने वाले तमाम लोगों के लिए अपनी पहचान सार्वजनिक तौर पर प्रदर्शित करना अनिवार्य होगा। उत्तर प्रदेश व उत्तराखंड सरकार द्वारा लिया गया यह निर्णय पूरी तरह उचित है। कांवड़ यात्रा के मार्ग पर लगाई गई दुकानों पर मलिक का नाम लिखने में किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिये। देखने में आया है कि कुछ अल्पसंख्यक हिंदू नाम रखकर दुकानें खोल लेते हैं। यह एक प्रकार से हिंदुओं की आस्था पर प्रहार है। अनेक शाकाहारी लोग मांसाहारी लोगों के हाथ का बना खाना अपवित्र समझते हैं। ऐसे में उन्हें धोखे से खाना खिलाना सरासर गलत है। कुछ लोग पूजा सामग्री, हार, फूल, प्रसाद की दुकान भी अपनी पहचान छुपा कर लगा लेते हैं। इसका खुलासा कई बार हो चुका है। गलत बोर्ड लगाकर हिंदुओं को भ्रमित करना किसी भी दृष्टि से उचित नहीं है। इस मसले पर राजनीति करना उचित नहीं है। इस तथ्य को भी अनदेखा नहीं किया जाना चाहिए कि अनेक स्थानों पर मुस्लिम अपनी पूरी पहचान के साथ खाने-पीने व मिठाइयों की दूकानें लगाते हैं और बड़ी संख्या में उनके ग्राहक हिंदू भी हैं। अतः इस आदेश को किसी प्रकार मुस्लिम-विरोधी नहीं कहा जा सकता है।

-सुभाष बुड़ावन वाला, रतलाम

बाइडेन की दुविधा

जो बाइडेन ने निसंदेह अपने कार्यकाल में अनेक राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय मामलों को ठीक से हैंडल किया। खासकर उनके प्रयास से ही यूक्रेन अब तक रूस के साथ संघर्ष के मैदान में टिका हुआ है। लेकिन वे इस समय बढ़ती उम्र तथा अनेक शारीरिक एवं मानसिक परेशानियों से जूझ रहे हैं। लेकिन वे चुनाव में ट्रम्प को टक्कर देने से पीछे नहीं हटना चाहते हैं। हालांकि, पिछले सप्ताह तीसरी बार कोविड होने के बाद कहा कि अगर उनके डॉक्टर कहेंगे तो वे चुनाव मैदान से हटने के बारे में सोचेंगे। लेकिन वे इसमें जितना समय लगाएंगे उतना ही फायदा ट्रम्प को होगा। इसलिए अब बिना समय गंवाए जो बाइडेन को कमला हैरिस या किसी और का नाम प्रस्तावित कर देना चाहिए। अब तक 40 से ऊपर डेमोक्रेटिक नेताओं ने उनसे मैदान से हटने की विनती की है। यहाँ तक उनके बॉस रह चुके बराक ओबामा ने भी कह दिया है कि बाइडेन को निर्णय लेने में देरी नहीं करनी चाहिए। जो बाइडेन की दुविधा उनके, उनकी डेमोक्रेटिक पार्टी तथा संभवतः बाकी दुनिया के लिए भी घातक सिद्ध हो सकती है। अनेक राजनीतिक विश्लेषक साफ-साफ कह चुके है कि ट्रंप न केवल अमेरिका, बल्कि सारी दुनिया के लिए हानिकारक हो सकते हैं।

- जंग बहादुर सिंह, जमशेदपुर

रेल दुर्घटना

उत्तर प्रदेश में गोंडा के पास एक्सप्रेस की 3 बोगियां पलटने से 4 यात्रियों की दुखद मृत्यु और अनेक घायल हो गए। रेलवे द्वारा मृतकों के परिजनों को 10 लाख, गंभीर घायलों को 2.50 लाख व घायलों को 50 हजार रुपये मुआवजा देने की घोषणा की है। हादसे के बाद राजनेताओं की अनेक प्रतिक्रियायें आई हैं जो उनके पक्ष या विपक्ष में होने पर निर्भर करती हैं। लेकिन रेलवे में होने वाली दुर्घटनाओं पर गंभीरता से विचार कर एक समग्र नीति बनाने की आवश्यकता है। इससे पहले भी कुछ ही महीनों में कई ट्रेन दुर्घटनाएं हुई हैं, जिनमें काफी जान-माल का नुकसान हुआ है। हालिया दुर्घटना का कारण पटरी की खराबी बताया गया है, जबकि पहले की अनेक दुर्घटनायें ड्राइवरों या लाइनमैनों की गलतियों तथा ट्रेनों के टकराने से हुई हैं। रेल मंत्री अश्विनी वैष्णव ने कुछ समय पहले ट्रेनों को टकराने से बचाने वाले स्वचालित साफ्टवेयर कवच को सभी ट्रेनों में प्रयोग अनिवार्य करने की बात कही थी। लेकिन सारी ट्रेन दुर्घटनाओं का यही कारण नहीं है। इसलिए कवच प्रयोग के साथ ही पटरियों व सिग्नलों के रखरखाव तथा सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप से रेलवे में सुरक्षा सबंधी सभी पदों को जल्द से जल्द भरना भी यात्रियों की सुरक्षा हेतु जरूरी है।

-शकुंतला महेश नेनावा, इंदौर

पौष्टिक भोजन जरूरी

देश में विश्वविद्यालयों का नियमन करने वाली संस्था विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने कॉलेजों को निर्देश दिए हैं कि कॉलेज की कैंटीन में पिज्जा, बर्गर और समोसे जैसे जंक फूड की बिक्री पर रोक लगाई जाए। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता है कि खिलाड़ियों व पहलवानों के लिए शक्तिदायक आहार की तरह पढ़ने वाले छात्रों के लिए भी पौष्टिक भोजन जरूरी है। अपना शहर और परिवार छोड़ कर पढ़ने के लिए अन्य शहरों में गए लगभग सभी विद्यार्थी फास्ट फूड, पिज़्ज़ा, बर्गर, नुडल्स आदि खाकर भूख मिटाते हैं। लेकिन इसका दुष्प्रभाव उनके शरीर पर भी पड़ता है। आंखों व दिमाग पर भी पड़ता है। ऐसी स्थिति में विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का यह निर्देश उचित है। लेकिन इसके साथ ही फास्ट फूड के विकल्प के रूप में ऐसे खाद्य पदार्थों को प्रोत्साहन देना जरूरी है जो पैकिंगों में उपलब्ध हों, लंबे समय तक सामान्य तापमान पर रखे जा सकते हों, स्वाद में बेहतर तथा पौष्टिक होने के साथ ही नौजवानों के लिए स्वीकार्य हों। अनेक स्थानीय व देशी खाद्य पदार्थ आसानी से फास्ट फूड का विकल्प बन सकते हैं।

- विभूति बुपक्या, खाचरोद

पाठक अपनी प्रतिक्रिया ई-मेल से responsemail.hindipioneer@gmail.com पर भी भेज सकते हैं।

मैं किसी भी समुदाय की प्रगति को महिलाओं द्वारा की गई उन्नति के पैमाने से मापता हूं। - डॉ. भीमराव आंबेडकर

बांग्लादेश में हिंसक प्रदर्शनों के बीच वहां के सर्वोच्च न्यायालय ने विवादित आरक्षण नीति पर जो साहसिक फैसला सुनाया है, उसके अनुसार अब 93 फीसदी नौकरियां योग्यता के आधार पर मिलेंगी। उम्मीद है कि यह फैसला वहां फैली अशांति पर विराम लगाएगा।

बांग्लादेश और आरक्षण

बांग्लादेश में हो रहे हिंसक प्रदर्शनों के बीच वहां के सर्वोच्च न्यायालय ने विवादास्पद आरक्षण व्यवस्था में कटौती करने का जो साहसिक फैसला सुनाया है, उसके बाद देश में गृहयुद्ध जैसे हालात के काबू में आने की उम्मीद तो बंधी ही है, यह फैसला शेख हसीना के लिए भी बड़ी राहत है, जो इस वर्ष की शुरुआत में लगातार चौथी बार प्रधानमंत्री बनने के बाद अपने कार्यकाल का सबसे बड़ा विरोध प्रदर्शन झेल रही हैं। उल्लेखनीय है कि अलग-अलग श्रेणियों में मिलने वाले 56 फीसदी आरक्षण को बांग्लादेश की सरकार ने 2018 में खत्म कर दिया था। लेकिन, छोटी अदालत ने बीते महीने सरकार के इस फैसले को पलट दिया था, जिसके बाद से मुल्क में हिंसा का दौर जारी है, जिसमें अब तक करीब 115 लोग मारे जा चुके हैं और हजारों लोग घायल हुए हैं। मामले ने तूल तब पकड़ा, जब आरक्षण के खिलाफ आंदोलन में सरकार विरोधी तत्वों के दखल से पहले से चिढ़ीं प्रधानमंत्री हसीना ने एक इंटरव्यू में विवादास्पद बयान दिया, जो 1971 की लड़ाई के उन गद्दारों की ओर लक्षित था, जिन्होंने पाकिस्तान के इशारों पर बांग्लादेशी हितों को नुकसान पहुंचाया। उल्लेखनीय है कि हालिया आंदोलन के केंद्र में वह तीस फीसदी आरक्षण है, जो सरकारी नौकरियों में उन मुक्ति नायकों एवं उनके परिजनों को दिया जाता है, जिन्होंने 1971 के युद्ध में पाकिस्तान के खिलाफ युद्ध लड़ा था। इस आरक्षण के अलावा महिलाओं को दस, पिछड़े वर्गों को दस, अल्पसंख्यकों को पांच और दिव्यांगों को एक फीसदी आरक्षण के बाद योग्यता आधारित नौकरियां केवल 44 फीसदी ही बचती हैं और यही आंदोलनकारी छात्रों की सबसे बड़ी शिकायत है। लेकिन सर्वोच्च अदालत का ताजा निर्णय इस मायने में ऐतिहासिक एवं साहसिक है, कि सरकारी नौकरियों में आरक्षण को 56 फीसदी से घटाकर मात्र सात फीसदी कर दिया गया है। यानी अब 93 फीसदी नौकरियां

योग्यता के आधार पर मिलेंगी। 17 करोड़ की आबादी वाले बांग्लादेश में सड़कों पर विरोध प्रदर्शन कोई नई बात नहीं है, लेकिन छात्रों के प्रदर्शन ने जिस तरह से देशव्यापी रूप लिया, उसने शेख हसीना के लिए चिंताएं बढ़ाई हैं। बांग्लादेश दुनिया की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्थाओं में एक है, लेकिन बेरोजगारी की स्थिति जिस तरह से वहां चरम पर पहुंची है, उसे देखते हुए लगता है कि सर्वोच्च अदालत के ताजा फैसले ने सरकार को फिलहाल राहत तो दी है, लेकिन देखने वाली बात होगी कि पिछले पंद्रह साल से पदासीन शेख हसीना सरकार विरोधी एजेंडे और जनता की स्वाभाविक नाराजगी की चुनौतियों से कैसे निपटेंगी।

कन्नड़ कार्ड खेलती कर्नाटक सरकार

सुप्रीम कोर्ट ने वर्ष 1994 के फैसले में राज्यों में माटी पुत्रों के आरक्षण को संविधान के अनुच्छेद 16 (2) के खिलाफ बताया था। विपक्ष के नेता संविधान और न्याय की बात कर रहे हैं, तो फिर उन्हीं की पार्टी की सरकार सांविधानिक व्यवस्था के बगैर निजी क्षेत्र में आरक्षण कैसे लागू कर सकती है?

विराग गुप्ता
सुप्रीम कोर्ट के वकील

जम्मू-कश्मीर में अनुच्छेद-370 की समाप्ति से पूरे देश में एकीकरण का माहौल बना था। लेकिन कर्नाटक, हरियाणा और झारखंड जैसे राज्यों में निजी क्षेत्र की ग्रुप सी और डी वर्ग की नौकरियों में स्थानीय लोगों को आरक्षण देने का कानून बनने से राष्ट्रीय एकता के साथ आर्थिक विकास की रफ्तार गड़बड़ा सकती है। आरक्षण की राजनीति के पैतरे को अंतरराष्ट्रीय नजरिये से समझना जरूरी है। बांग्लादेश में आरक्षण की आग बढ़ने से भारतीयों का पलायन बढ़ रहा है। उसी तर्ज पर कर्नाटक में सिद्धरमैया सरकार कन्नड़ कार्ड खेल रही है। सरकारी खजाने से रेवड़ियां बांटने को अर्थव्यवस्था के लिए खतरनाक माना जा रहा है। लेकिन निवास को मनमाफिक तरीके से निर्धारित करने के कानूनों से अर्थव्यवस्था के साथ संविधान और संघीय व्यवस्था भी चरमरा सकती है।

संविधान की सातवीं अनुसूची के अनुसार, नागरिकता, आईटी, कंपनी कानून और आरक्षण जैसे विषय पर कानून बनाने का अधिकार केंद्र सरकार के पास है। भाषा के आधार पर राज्यों के गठन के बाद महाराष्ट्र, तमिलनाडु और पंजाब जैसे कई राज्यों में माटी पुत्रों को रोजगार में प्राथमिकता देने की पहल नेताओं ने की। लेकिन शिक्षा, डिजिटल और संचार के प्रसार से राज्यों में उपराष्ट्रवाद के आंदोलन कमजोर होते गए। देश की राजधानी दिल्ली है, लेकिन वित्तीय राजधानी के तौर पर मुंबई और आईटी राजधानी के तौर पर बंगलूरू, हैदराबाद और चेन्नई जैसे शहरों का विकास हुआ। इन शहरों के विकास में सभी राज्यों के निवासियों के साथ केंद्रीय करों का बहुत बड़ा योगदान है।

कर्नाटक के प्रस्तावित कानून से ई-कॉमर्स, स्टार्टअप, आईटी, आईटीईएस और जीसीसी सेक्टर की कंपनियां सबसे ज्यादा प्रभावित होंगी। इसलिए भाषा या क्षेत्र के आधार पर निजी क्षेत्र में आरक्षण गलत और असांविधानिक है। भ्रष्टाचार और नेतृत्व परिवर्तन की चुनौतियों से जूझ रही सिद्धरमैया सरकार आरक्षण बिल को नए सिरे से विधानसभा

में पारित कराने की कोशिश कर सकती है। इसलिए मंत्रिमंडल की नई मंजूरी के बाद यदि विधानसभा में बिल को पारित किया जाए, तो उस बिल को राष्ट्रपति की मंजूरी के लिए राज्यपाल भेज सकते हैं।

सियासत से हटकर निजी क्षेत्र में आरक्षण के सांविधानिक पहलुओं की पड़ताल बेहद जरूरी है। संविधान की सातवीं अनुसूची के अनुसार, नागरिकता से जुड़े मामलों में सिर्फ केंद्र सरकार और संसद को ही कानून बनाने का अधिकार है। संविधान के अनुच्छेद-14 में समानता और अनुच्छेद-19 में व्यापार की स्वतंत्रता के बारे में प्रावधान हैं।

अनुसूचित जाति व जनजाति, महिला, ओबीसी, दिव्यांग जैसे वंचित वर्ग को आरक्षण देने के लिए संविधान में अपवाद स्वरूप प्रावधान किए गए हैं। सरकार द्वारा दी गई रियायती भूमि पर बनाए गए स्कूलों और अस्पतालों में गरीबों और आर्थिक रूप से कमजोर (ईडब्ल्यूएस) वर्ग के लोगों को सस्ती शिक्षा और इलाज के लिए प्रावधान हो सकते हैं। लेकिन निजी क्षेत्र में क्षेत्र या भाषा के आधार पर आरक्षण के लिए कोई सांविधानिक व्यवस्था नहीं है। इस बारे में संविधान के अनुच्छेद 16 (3) और 35 ए के तहत राज्यों के बजाय सिर्फ संसद को ही कानून बनाने की शक्ति हासिल है।

वर्ष 1992 के सुप्रीम कोर्ट के फैसले के अनुसार, सरकारी क्षेत्र में आरक्षण की अधिकतम सीमा 50 फीसदी निर्धारित की गई है। ऐसे में राज्यों में निजी क्षेत्र में उससे ज्यादा आरक्षण कैसे दिया जा सकता है? हाईकोर्ट के जजों ने आंध्र प्रदेश के कानून को असांविधानिक बताया था। हरियाणा के कानून को तो हाईकोर्ट ने पिछले साल रद्द ही कर दिया था। झारखंड का कानून भी हाईकोर्ट की वजह से आगे नहीं बढ़ पाया। सरकारी खर्चे पर मुकदमेबाजी बढ़ने से दोहरा नुकसान होता है। बड़े वकीलों को फीस देने के नाम पर सरकारी खजाने को भारी नुकसान होने के साथ इससे आम लोगों के मुकदमों की सुनवाई और फैसलों में विलंब होता है।

बिहार जैसे पिछड़े राज्य केंद्र सरकार से बजट में विशेष पैकेज की मांग कर रहे हैं। दूसरी तरफ बंगलूरू और गुरुग्राम जैसे विकसित शहरों को राज्य सरकारें सियासी जागीर मानते हुए न केवल सांविधानिक व्यवस्था, बल्कि ईज ऑफ डूइंग बिजनेस को भी तबाह करने पर उतारू हैं। वर्ष 2011 की जनसंख्या के अनुसार, बंगलूरू की 96 लाख की आबादी में 50 फीसदी दूसरे राज्यों से आए हुए लोग हैं।

भारतीय गणतंत्र में नागरिक सर्वोपरि हैं, जिन्हें पूरे देश में रोजगार और व्यापार की सांविधानिक आजादी है। निजी क्षेत्र में आरक्षण लागू करने के नाम पर राज्यों में इंस्पेक्टर राज का बढ़ना उदारीकरण और वैश्विक अर्थव्यवस्था के खिलाफ है। राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था, व्यापार और वाणिज्य को बाधित करने का कानून बनाने की इजाजत किसी भी राज्य को नहीं दी जा सकती। कर्नाटक का यह बिल अगर कानून बन गया, तो टेक इंडस्ट्री और अर्थव्यवस्था की गाड़ी पटरी से उतरने पर विदेशी निवेशकों का भारत की ग्रोथ स्टोरी से भरोसा डगमगा सकता है।

कई राज्यों में अनुसूचित जनजातियों और मूल निवासियों के आरक्षण के लिए संविधान में प्रावधान है। वर्ष 1957 में बनाए गए सार्वजनिक रोजगार (निवास के संबंध में आवश्यकता) अधिनियम के अनुसार, क्षेत्र के आधार पर नौकरियों में भेदभाव नहीं हो सकता। सुप्रीम कोर्ट ने वर्ष 1994 के फैसले में राज्यों में माटी पुत्रों के आरक्षण को संविधान के अनुच्छेद 16 (2) के खिलाफ बताया था। इसलिए निवास और भाषा के आधार पर आरक्षण का कोई भी कानून अदालत से निरस्त हो जाएगा। देश में साम्राज्यवादी कानूनों से मुक्ति का अभियान चल रहा है। दूसरी तरफ, रोजगार और गवर्नेंस बढ़ाने में विफल सरकारें क्षेत्र, जाति, भाषा और धर्म के आधार पर आरक्षण के झुनझुने से 'बांटो और राज करो' की ब्रिटिश तरकीब का बेशर्मी से इस्तेमाल कर रही हैं। विपक्ष के नेता राहुल गांधी संविधान, न्याय और भारत जोड़ने की बात कर रहे हैं, तो फिर उन्हीं की पार्टी की सरकार सांविधानिक व्यवस्था के बगैर निजी क्षेत्र में आरक्षण कैसे लागू कर सकती है?

edit@amarujala.com

जीवन धारा

पाउलो कोएलो

आप जब सच्चे दिल से कुछ चाहते हैं, तो पूरा ब्रह्मांड उसे हासिल करने में आपकी मदद करने के लिए तैयार हो जाता है। सपने के साकार होने की संभावना ही जीवन को दिलचस्प बनाती है।

जहां दिल लगेगा, वहीं आपको खजाना मिलेगा

जब हम बेहतर बनने की कोशिश करते हैं, तो हमारे आस-पास की हर चीज बेहतर हो जाती है। और आप जब सच्चे दिल से कुछ चाहते हैं, तो पूरा ब्रह्मांड उसे हासिल करने में आपकी मदद करने के लिए तैयार हो जाता है। हमारे सपने के साकार होने की संभावना ही जीवन को दिलचस्प बनाती है। ऐसा लगता है कि हर कोई इस बारे में स्पष्ट विचार रखता है कि दूसरे लोगों को अपना जीवन कैसे जीना चाहिए, लेकिन किसी को भी अपने जीवन के बारे में कोई जानकारी नहीं होती। इसीलिए साधारण चीजें भी अत्यंत असाधारण होती हैं और केवल बुद्धिमान ही उन्हें देख सकते हैं। याद रखिए कि जहां आपका दिल लगेगा, वहीं आपको अपना खजाना मिलेगा। हम जीवन में हमेशा वह सब करने में सक्षम होते हैं, जिसका हम सपना देखते हैं। किसी से प्रेम किया जाता है, तो बस उससे प्रेम किया जाता है। प्रेम करने के लिए किसी कारण की आवश्यकता नहीं होती।

दुख का डर खुद दुख से भी बदतर है। और कोई भी दिल अपने सपनों की तलाश में कभी दुख नहीं पाता, क्योंकि तलाश का हर पल ईश्वर और अनंत काल के साथ एक पल की मुलाकात है। लेकिन जब प्रत्येक दिन पिछले दिन के समान होता है, तो इसका कारण है कि लोग उन अच्छी चीजों को पहचान नहीं पाते हैं, जो हर दिन सूर्योदय के समय उनके जीवन में घटती हैं। सफाई देने में अपना समय बर्बाद न करें-लोग केवल वही सुनते हैं, जो वे सुनना चाहते हैं। जब आपको अपना रास्ता मिल जाए, तो डरने की जरूरत नहीं है। गलतियां करने के लिए पर्याप्त साहस की आवश्यकता होती है। निराशा, हार और हताशा वे उपकरण हैं, जिनका उपयोग परमेश्वर हमें रास्ता दिखाने के लिए करते हैं। अपने डर के आगे न झुकें। अगर आप ऐसा करेंगे, तो अपने दिल से बात नहीं कर पाएंगे। लिखना बहुत जरूरी है और आंसू ऐसे शब्द हैं, जिन्हें लिखा जाना चाहिए। जब हम कम से कम उम्मीद करते हैं, तो जीवन हमारे साहस और बदलाव की इच्छा को परखने के लिए हमें चुनौती देता है। ऐसे समय में, यह दिखाया करने का कोई मतलब नहीं है कि कुछ भी नहीं हुआ है या यह कहने का कोई मतलब नहीं है कि हम अभी तैयार नहीं हैं। चुनौती इंतजार नहीं करेगी। जीवन पीछे मुड़कर नहीं देखता। हमारे लिए यह तय करने के लिए एक सप्ताह का समय पर्याप्त है कि हम अपनी नियति को स्वीकार करते हैं या नहीं। हमारे जीवन में स्कूल, कॉलेज और नौकरी की परीक्षाओं से परे एक और परीक्षा होती है, जो कभी भी हो सकती है। आध्यात्मिक मार्ग पर दो सबसे कठिन परीक्षाएं हैं - सही समय की प्रतीक्षा करने का धैर्य और जो कुछ भी हमारे सामने आए, उससे निराश न होने का साहस। कई बार ऐसा होता है कि मुसीबतें हमारे जीवन में प्रवेश करती हैं और हम उन्हें टालने के लिए कुछ नहीं कर सकते। लेकिन वे किसी कारण से हमारे जीवन में आती हैं। जब हम उन पर काबू पा लेते हैं, तभी हम समझ पाते हैं कि वे क्यों हमारे जीवन में आई थीं।

भरोसा रखें, आगे बढ़ें

हममें से कोई नहीं जानता कि अगले मिनट क्या हो सकता है, फिर भी हम आगे बढ़ते हैं, क्योंकि हम भरोसा करते हैं। जिस किसी ने भी कोई ऐसी चीज खो दी है, जिसे वह हमेशा के लिए अपना समझता था, उसे अंततः यह एहसास होता है कि वास्तव में कुछ भी उसका नहीं है।

सूत्र

दूसरा पहलू

मिथिलांचल के केंद्र दरभंगा में मौजूद पूजा स्थल में होती है मां काली की उपासना। पेरिस में बनी थी श्यामा माई की प्रतिमा।

चिता पर बना भव्य मंदिर जहां होते हैं मांगलिक कार्य

सहसा विश्वास नहीं होता...पर जब साक्षात हो, तो न मानने की कोई वजह भी नहीं। यों तो बिहार के मिथिलांचल का अलग ही राजनीतिक और धार्मिक महत्व है, पर दरभंगा में मौजूद श्यामा माई मंदिर के बारे में ज्यादा लोग नहीं जानते। वह अप्रैल की एक तपती दोपहर थी, जब इस मंदिर के दर्शन का अवसर प्राप्त हुआ। किसी भी देवालय जैसी गरिमा लिए यह मंदिर विशाल मैदान के कोने में संन्यासी की सी तपस्या में लीन दिखता है। मौन टूटता है भक्तों के आगमन से।

भूपेंद्र कुमार

पुजारी बताते हैं यह मंदिर दरभंगा महाराज रामेश्वर सिंह के निधन पर, जहां उनकी चिता जलाई गई उसी स्थान पर वर्ष 1933 में बनवाया गया था। यह मां काली के साधक थे।

वहां के पुजारी कहते हैं कि यह मंदिर दरभंगा महाराज रामेश्वर सिंह के निधन पर, जहां उनकी चिता जलाई गई उसी स्थान पर वर्ष 1933 में बनवाया गया था। यह मां काली के साधक थे। मिथिलांचल में एक मान्यता है कि शादी के एक साल बाद तक नव दंपती श्मशान घाट नहीं जा सकते, लेकिन इस मंदिर में सारे मांगलिक कार्यों के साथ ही शादियां भी होती हैं।

मिथिलांचल में एक मान्यता है कि शादी के एक साल बाद तक नव दंपती श्मशान घाट नहीं जा सकते, लेकिन इस मंदिर में सारे मांगलिक कार्यों के साथ ही शादियां भी होती हैं।

पुजारी बताते हैं कि श्यामा माई मां सीता का ही रूप हैं। इस बात की व्याख्या महाराज रामेश्वर सिंह के सेवक लालदास ने *रामेश्वर चरित मिथिला रामायण* में की है। इसका आधार वाल्मीकि रचित *रामायण* है। इसमें लिखा है कि रावण का वध होने के बाद सीता ने राम से कहा कि जो भी सहस्त्रानंद का वध करेगा, वही असली वीर होगा। यह सुनकर राम युद्ध के लिए निकल गए। युद्ध के दौरान सहस्त्रानंद का एक तीर राम को लगा। इस पर माता सीता को क्रोध आया और उनका रंग काला पड़ गया। सहस्त्रानंद का वध करने के बाद भी, जब उनका क्रोध शांत नहीं हुआ, तो भगवान शिव को आना पड़ा। भगवान के सीने पर पैर पड़ने से माता बेहद लज्जित हुईं और उनकी जिह्वा बाहर आ गई। यही वजह है कि उन्हें यहां काली नहीं, श्यामा के नाम से जाना जाता है। नवरात्र में यहां मेला लगता है और भक्तों का तांता लगा रहता है।

आंकड़े

ऑपरेटिंग सिस्टम

माइक्रोसॉफ्ट के ऑपरेटिंग सिस्टम विंडोज की गड़बड़ी ने दुनिया भर में हलचल मचा दी। हिस्सेदारी के मामले में विंडोज दूसरे नंबर है।

एंड्रॉयड	44.66%
विंडोज	27.14%
आईओएस	17.68%
मैकओएस	5.55%
लीनक्स	1.51%

नोट : ये आंकड़े ऑपरेटिंग सिस्टम में कुल हिस्सेदारी के हैं। | स्रोत : SCGS

आज सावन का पहला सोमवार है। एक साहूकार का बेटा बारह वर्ष की उम्र में मर गया, पर सोमवार व्रत के प्रभाव से भोलेनाथ ने उसके बेटे को जीवित कर दिया।

भक्त के बेटे को मिला जीवनदान

भगवान भोलेनाथ के प्रिय मास सावन में सोमवार व्रत का खास महत्व है। प्राचीन काल में एक साहूकार को कोई संतान नहीं थी। उसने हर सोमवार का व्रत किया। उसकी भक्ति से प्रसन्न होकर पार्वती के आग्रह पर शिव जी ने उसे पुत्र प्राप्ति का वरदान दिया, लेकिन उसकी आयु बारह वर्ष ही थी।

कुछ समय बाद साहूकार के घर पुत्र पैदा हुआ। ग्यारह वर्ष का होने पर सेठानी ने बेटे की शादी की बात की, पर साहूकार ने बेटे को पढ़ने के लिए मामा के साथ काशी भेज दिया। काशी जाते समय रास्ते में एक राजकुमारी का विवाह हो रहा था, पर जिस राजकुमार के साथ उसका विवाह होना था, वह काना था। दूल्हे के पिता ने बेटे के काने होने की बात छिपाने के लिए साहूकार के बेटे के साथ राजकुमारी का विवाह करा दिया। राजकुमारी ने काने के साथ जाने से इन्कार कर दिया। वहीं, साहूकार का बेटा अपने मामा के साथ चला गया।

उम्र पूरी होने पर साहूकार के बेटे की मौत हो गई। सब रोने लगे। इसी बीच वहां से शिव और पार्वती निकले। लोगों को रोता हुआ देख, पार्वती ने बच्चे को पुनर्जीवित करने के लिए शिव जी से कहा। उन्होंने उसकी जीवनदान दे दिया। भगवान ने साहूकार को स्वप्न दिया कि यह बच्चा तुम्हारे सोमवार के व्रत के प्रभाव से जीवित हुआ है। दूसरी ओर, राजकुमारी भी बहू बनकर उसके घर पर आ गई। इससे सेठानी की इच्छा भी पूरी हो गई।

अंतर्यात्रा
संकलित

अमर उजाला

पुराने पन्नों से — 07 जून, 1956

फ्रांस को अल्जीरिया पर नेहरू की पंचसूत्री योजना अस्वीकार

फ्रांस को अल्जीरिया में मध्यस्थता अस्वीकार

पंचसूत्री नेहरू योजना अस्वीकार

वाशिंगटन, 6 जून। फ्रांस ने मिस्र के राष्ट्रपति नासिर की उस पेशकश को ठुकरा दिया है जिसमें वह फ्रांस और अल्जीरिया के बीच मध्यस्थता करने को तैयार थे। फ्रांस ने कहा कि उसकी सरकार अल्जीरिया की गुत्थी सुलझाने के लिए भारतीय प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा पेश की गई पंचसूत्री योजना स्वीकार नहीं कर सकती।

पेरिस में फ्रांस के प्रधानमंत्री मुरिये मौले ने कहा कि उनकी सरकार अल्जीरिया की गुत्थी सुलझाने के लिए भारतीय प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू द्वारा पेश की गई पंचसूत्री योजना स्वीकार नहीं कर सकती।

किसानों की आमदनी बढ़ाने वाला हो बजट

कल आ रहे वर्ष 2024-25 के बजट में पीएम किसान सम्मान निधि जैसी प्रत्यक्ष आय सहायता वाली योजनाओं के लिए आवंटन बढ़ना चाहिए।

केसी त्यागी | अर्थव्यवस्था

भारत, जो एक समय मुख्य रूप से कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था थी, ने पिछले कुछ दशकों में अपनी आर्थिक संरचना में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखा है। सकल घरेलू उत्पाद (जीडीपी) में कृषि की हिस्सेदारी 1947 में 60 फीसदी से घटकर पिछले वित्तीय वर्ष में 15 फीसदी हो जाना एक गहन बदलाव का प्रतीक है, जो देश के आर्थिक परिदृश्य की उभरती अस्थिरता को दर्शाता है।

कृषि क्षेत्र की प्रगति भारत की नब्ज तय करती है। मंगलवार को 2024-25 का बजट आ रहा है, लेकिन यह स्वीकार करना और महत्वपूर्ण हो जाता है कि कृषि का योगदान देश के आर्थिक और सामाजिक ढांचे में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक तरफ एमएसपी बढ़ोतरी और फसल बीमा योजनाओं, जैसी हालिया पहलों ने आशा की किरणें जगाई हैं, दूसरी तरफ भारतीय कृषि को प्रभावित करने वाली चुनौतियां जैसे-बढ़ती लागत, अस्थिर बाजार कीमतें, कर्ज के नीचे दबता किसान, जलवायु परिवर्तन और सीमित बुनियादी ढांचा नए सिरे से

ध्यान केंद्रित करने और नवीन समाधानों की मांग करती हैं। यह बजट नई जमीन तैयार करने और अधिक मजबूत, टिकाऊ और समावेशी कृषि परिदृश्य विकसित करने का एक महत्वपूर्ण अवसर प्रस्तुत कर सकता है। किसान देश की अर्थव्यवस्था की रीढ़ हैं।

बीज, उर्वरक, बिजली और पानी आदि पर भारी सब्सिडी देने के बावजूद कई किसान संकट में हैं। बढ़ती कृषि लागत के बीच भारतीय किसानों को गंभीर ऋण संकट का सामना करना पड़ता है, औसत घरेलू ऋण सात लाख रुपये से अधिक है। कर्ज और आर्थिक संकट के बोझ तले दबे किसान आत्महत्या करने को मजबूर हैं। एनसीआरबी के आंकड़ों के मुताबिक, साल 2022 में 6,083 कृषि मजदूरों ने खुदकुशी की। देश की औसत प्रति व्यक्ति आय 12,500 है, किसानों की इससे भी कम।

बजट में किसानों की आय बढ़ाने वाली नीतियों को बढ़ावा मिले। पीएम किसान सम्मान निधि जैसी प्रत्यक्ष आय सहायता वाली योजनाओं के लिए आवंटन बढ़ाना, समय पर व कुशल संवितरण सुनिश्चित करते हुए बहुत जरूरी वित्तीय स्थिरता प्रदान कर सकता है। किसानों को उनकी उपज का उचित मूल्य देने के लिए प्रत्येक फसल की घोषित न्यूनतम समर्थन मूल्य पर खरीद सुनिश्चित करने के लिए बजट में विशेष प्रावधान किया जाए।

ऋण राहत योजनाओं, सब्सिडी ऋण या फसल बीमा कार्यक्रमों के लिए ज्यादा धनराशि का प्रावधान जरूरी है। आर्थिक सर्वेक्षण 2022-23 के अनुसार, भारत के केवल 47 फीसदी शुद्ध बोए गए क्षेत्र में सुनिश्चित सिंचाई तक पहुंच है और अपर्याप्त भंडारण के कारण फसल के बाद के नुकसान का अनुमान 10-25 फीसदी है। बजट में सड़क नेटवर्क और कोल्ड स्टोरेज सुविधाओं के निर्माण और उन्नयन के लिए पर्याप्त धनराशि आवंटित की जानी चाहिए। ग्रामीण विद्युतीकरण में निवेश और सूचना प्रौद्योगिकी तक बेहतर पहुंच डिजिटल विभाजन को पाट सकती है। ग्रामीण स्वास्थ्य सुविधाओं, स्वच्छता और बुनियादी ढांचे का विस्तार महत्वपूर्ण है।

बजट में कृषि शिक्षा और कौशल विकास कार्यक्रमों में निवेश को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। समर्पित कृषि विश्वविद्यालयों की स्थापना और मौजूदा संस्थानों को आधुनिक, व्यावहारिक प्रशिक्षण कार्यक्रम पेश करने के लिए प्रोत्साहित करना मौजूदा कौशल अंतर को पाट सकता है। कृषि उद्यमिता और एग्रीटेक स्टार्टअप को बढ़ावा देना नवाचार को बढ़ावा दे सकता है और युवाओं के लिए नए अवसर पैदा कर सकता है। उन्नत बीजों, सूखा प्रतिरोधी फसलों और टिकाऊ कृषि पद्धतियों के लिए अनुसंधान में निवेश बढ़ाने से कृषि उत्पादकता और आय को बढ़ावा मिल सकता है।

मजबूत निर्यात बुनियादी ढांचे का निर्माण और अनुकूल व्यापार समझौतों पर बातचीत से भारतीय कृषि उपज के लिए नए बाजार खुल सकते हैं, आर्थिक विकास को बढ़ावा मिल सकता है और नौकरियां पैदा हो सकती हैं। कृषि में महिलाओं के महत्वपूर्ण योगदान को स्वीकार करते हुए, उन्हें सशक्त बनाने के लिए बजट में महिला-विशिष्ट कार्यक्रमों और पहलों को बढ़ावा देना चाहिए।

कृषि को पुनर्जीवित करने के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण की आवश्यकता है। कृषि बजट में राशि बढ़ाने के साथ ही आवंटित राशि का सफल और पूर्ण क्रियान्वन सुनिश्चित करना भी आवश्यक है। इस बजट को एक अकेली घटना के रूप में नहीं देखा जाना चाहिए, बल्कि एक संपन्न, टिकाऊ और समावेशी कृषि पारिस्थितिकी तंत्र के दीर्घकालिक दृष्टिकोण की दिशा में एक कदम के रूप में देखा जाना चाहिए। पर्यावरण संरक्षण, किसान सशक्तीकरण, बुनियादी ढांचे के विकास, शिक्षा और मूल्य संवर्धन में निवेश को प्राथमिकता देकर, हम एक ऐसे भविष्य का निर्माण कर सकते हैं, जहां हमारे किसान समृद्ध हों, खाद्य सुरक्षा की गारंटी हो और हमारे ग्रामीण समुदाय समृद्ध हों। आगामी बजट भारत में कृषि समृद्धि के एक नए युग के लिए उपजाऊ जमीन बोने वाला बीज बने।

(साथ में विज्ञान नेहवाल)